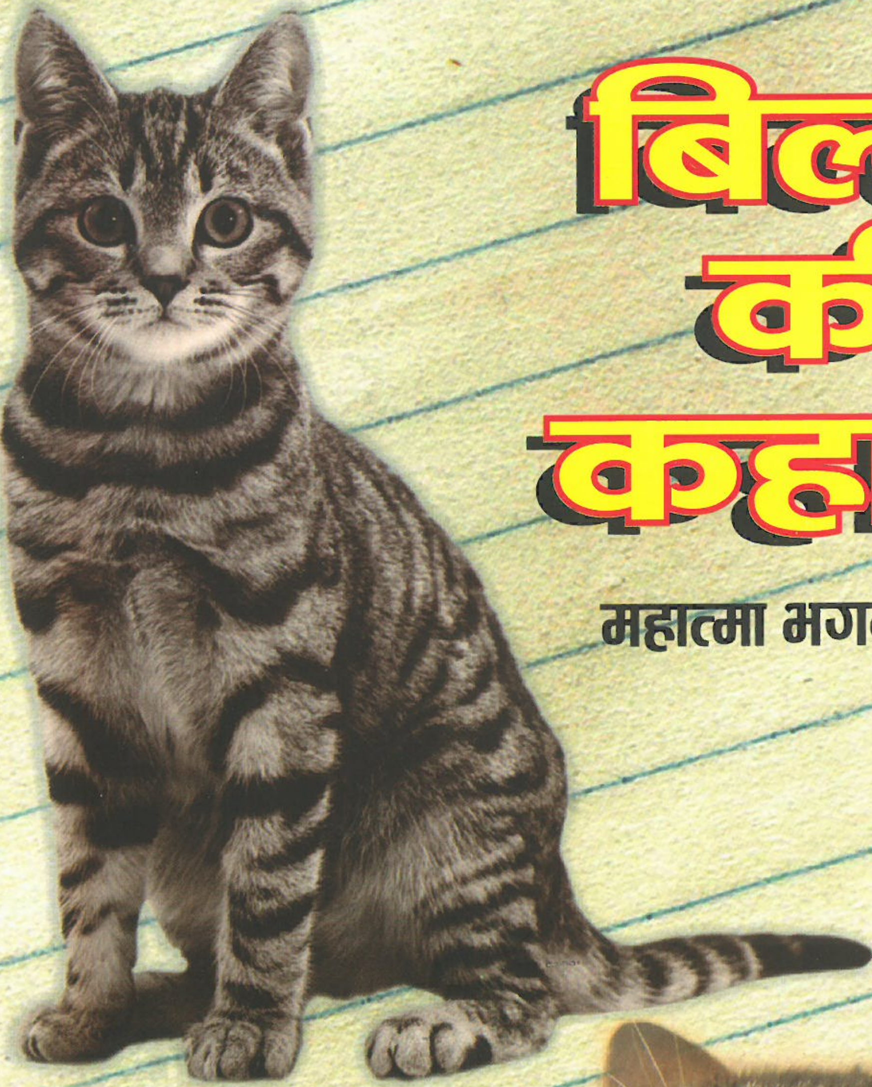
बिल्ली की कहानी

महात्मा भगवानदीन







बिल्ली की कहानी

महात्मा भगवानदीन

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-२२१००१

प्रकाशक :
सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-२२१ ००१
फोन-फैक्स : ०५४२-२४४०३८५
Email-sarvodayavns@yahoo.co.in

•

संस्करण : नौवाँ
प्रतियाँ : २,०००
कुल प्रतियाँ : २१,०००
अक्टूबर, २०१७

•

मूल्य : **चालीस रुपये (रु. ४०/-)**

•

अक्षर संयोजन :
खण्डेलवाल प्रेस एण्ड पब्लिकेशन्स
मानमन्दिर, दशाश्वमेध,-
वाराणसी-२२१ ००१

•

मुद्रक :
महावीर प्रेस,
भेलूपुर
वाराणसी-२२१ ०१०

प्रकाशकीय

'बिल्ली की कहानी' का पहला संस्करण सन् १९६० में तीन भागों में प्रकाशित हुआ था। तीसरे संस्करण में तीनों भाग एक ही पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ।

'बिल्ली की कहानी' एक रोचक तथा ज्ञान वर्द्धक कहानी है। एक बिल्ली अपने जीवन की कहानी इस तरह सुनाती है कि बच्चे उससे काफी बोध ले सकते हैं। जीवन में अनेक प्रकार के उतार-चढ़ाव आते हैं, सुख-दुख आते हैं, संघर्ष के मौके आते हैं और अपना रास्ता स्वयं ही तय करना पड़ता है। बच्चों के लिए ऐसी कहानी लिखकर लेखक ने सचमुच बड़ी सेवा की है।

अब यह संस्करण पाठकों के हाथ में देते हुए हमें प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। हमें आशा है इस पुस्तक के अन्य संस्करणों की भाँति ही इस संस्करण का भी स्वागत होगा।

इस रचना का मराठी में भी अनुवाद हुआ है और वह परंधाम प्रकाशन, पवनार (वर्धा) से प्रकाशित हुआ है। •

प्रस्तावना

बचपन में बैल साहब की लिखी हुई 'बिल्ली की कहानी' पढ़ी थी। कहानी अंग्रेजी में थी। कुछ आनन्द नहीं आया था। अब सतहत्तर वर्ष की उम्र में एक दिन न जाने कहाँ से वही 'बिल्ली की कहानी' की किताब मेरे पौत्र अखिलेश के हाथ में पड़ गयी। उसने उसे अटक-अटककर पढ़ना शुरू किया। यह देख कि वह उसमें रस ले रहा है, मेरे मन ने कहा कि इसी जैसी या इससे मिलती-जुलती कहानी ऐसी क्यों न लिख दी जाय, जो हिन्दुस्तानी बच्चों के काम आये। मेरे विचार का समर्थन मेरी पुत्रवधू कृष्णा ने किया। मैं बोलने बैठ गया, वह लिखने बैठ गयी और यह कहानी तैयार हो गयी।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन इसे आप तक पहुँचा रहा है, यह और भी अच्छी बात है।

—लेखक

अनुक्रम

पहले इसे पढ़िये

प्यारे बच्चो, मैं आज आपको अपनी कहानी सुनाने जा रही हूँ। मेरी सूरत-शकल को देखकर तुम्हें मुझसे सचमुच घृणा हो सकती है । क्योंकि मेरी पूछ कटी हुई है। मेरे एक कान भी नहीं है। मेरे बाल गिर गये हैं । एक टाँग लँगड़ी भी है । तुम मुझसे आँख फेरकर निकल सकते हो । पर बच्चो, तुम्हें याद रहे, मैं बड़े ऊँचे वंश की बिल्ली हूँ । मेरा बचपन बड़े घरानों के लड़के-लड़कियों की गोद में बीता है। फूलों की सेज पर सोयी हूँ । गंगा-जमुनी कुर्सियों पर बैठी हूँ। बग्घियों में सफर किया है। मलाईदार दूध पर पली हूँ। इसलिए मैं तुमसे कहती हूँ कि तुम मेरे पास आओ, थोड़ी देर बैठो और मेरी कहानी सुनो । उससे तुम्हें बड़ा लाभ होगा । तुम जीवन में सुखी रह सकोगे ।



बात सुनकर बालक बिल्ली के पास घेरा बनाकर बैठ गये।

बिल्ली की यह बात सुनकर बालक ठिठक गये । थोड़ी देर उनमें कानाफूसी हुई और फिर बिल्ली के पास घेरा बनाकर बैठ गये । बिल्ली भी आराम से बैठ गयी और अपनी कहानी इस तरह कहने लगी :

मैं बूढ़ी हूँ, पर मैंने जमाना देखा है । दुनिया छान डाली है । जिन बालकों को अपनी ही अपनी सूझती है और जो बालक हरदम घमंड के नशे में रहते हैं, दूसरों की परवाह ही नहीं करते, उनको मेरी यह कहानी सीखों से भरी हुई मिलेगी । मेरी कहानी सुनकर उन्हें यह पता चल जायगा कि दुनिया उनके ही लिए नहीं बनी, सबके लिए बनी है । लड़के-लड़कियों सभी को मेरी कहानी सुनकर ऐसा मालूम होने लगेगा कि सचमुच वे अपनी ही अपनी सोचकर भूल कर रहे हैं । उन्हें अपनी कम-से-कम सोचनी चाहिए, दूसरों की ज्यादा-से-ज्यादा । उन्हें यह भी मालूम हो जायगा कि बुद्धिमान् और भले बनने की यही बढ़िया रीति है। अच्छा, तो अब मेरी कहानी शुरू होती है ।

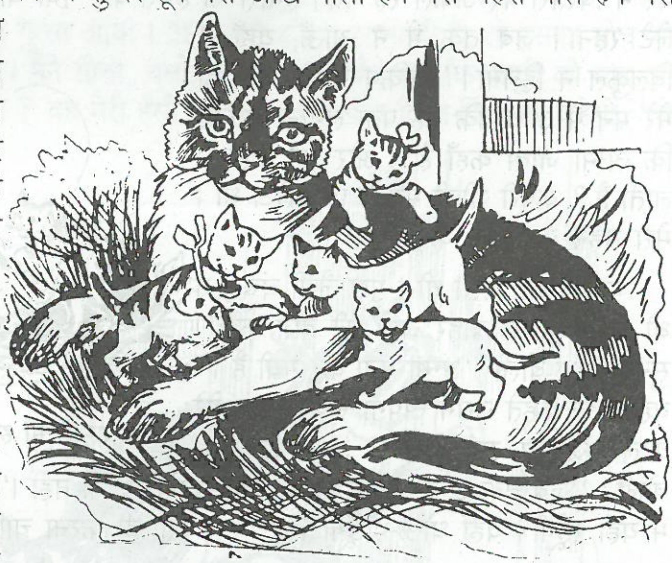
तुम्हारी

बिल्ली मौसी

मेरा शैशव-काल

मेरी भी माँ थी। मैं भी पैदा हुई थी। जानते हो, मैं जब पैदा हुई थी, तो मैं देख नहीं सकती थी। पाँच-सात दिन बाद ही मेरी आँखें खुलीं। तब मैं कुछ देख सकी। पैदा होते ही मुझे यह पता ही गया था कि मेरी माँ का बिछौना गुदगुदी घास का है। मुझे वह बिछौना ऐसा ही मालूम हुआ, जिसे तुम फूलों की सेज कहते हो। दूध ही पीती थी, दूध ही खाती थी। कभी-कभी एक-दो चुहिया हाथ लग जाती थीं। बस, कभी-कभी। मलाई मुझे बेहद प्यारी थी।

कुछ ही दिनों में मुझे पता चल गया कि मैं सुन्दर हूँ। मेरी आँखें नीली हैं। मेरा चेहरा गोल है। मेरा बदन गुदगुदा है। मैं चाहूँ, तो अपना नाम 'चन्द्रमुखी' रख सकती हूँ। हाँ, मेरे कान छोटे-छोटे थे और बड़े तेज थे। दूर की सुन सकते थे। अब भी सुन लेते हैं। मेरे बाल काले-भूरे थे। उन पर कहीं-कहीं गहरे काले दाग थे। बड़े सुहावने लगते थे। मेरे चारों पाँव गहरे काले रंग के थे। मुझे बहुत पसन्द थे।



मैं गुदगुदी सेज पर लेटा करती और दूध ही पीती थी।

मैं तुम्हारी तरह ही घमण्डी थी। मैं घण्टों अपने बिस्तर पर लेटी रहती थी और सोचा करती थी कि सुन्दर होना कितनी बढ़िया बात है। मैं लेटे-लेटे अपनी लम्बी पूँछ मरोड़ती रहती थी। उससे खेला करती थी, उसे अपनी आँखों के सामने ले आती और देख-देखकर सियाती रहती। मैं उसे चाट-चाटकर खूब चमका लेती। बड़ा आनन्द आता था। मैं अपनी चारों टाँगें हवा में उछालती। उनकी बार-बार जाँच करती कि कहीं उन पर धूल तो नहीं लग गयी! अगर कहीं लगी होती, तो चाटकर साफ कर डालती। गन्दगी मुझे जरा पसन्द न थी। वास्तव में मुझे यह सोचकर शरम आ जाती कि उन दिनों मैं सिवा अपने शृंगार के कुछ और सोचती ही न थी।



मैं उसे चाट-चाटकर खूब चमका लेती।

मेरे एक बहन थी और दो भाई थे। बहन सिर से पैर तक सफेद थी। दोनों भाई ललौंए थे। ललौंए होना हम बिल्लियों में कुछ अच्छा नहीं समझा जाता। यह बात मुझे जल्दी ही मालूम हो गयी थी। इसलिए मैं अपने भाइयों से अपने को खूबसूरत समझती थी। सफेद-सफेद होना मुझे बिलकुल पसन्द नहीं था। इसलिए मैं अपनी बहन को भी सुन्दर नहीं समझती थी। यही कारण था कि मैं घमण्डी हो गयी थी। ●

मैं निकल पड़ी :२:

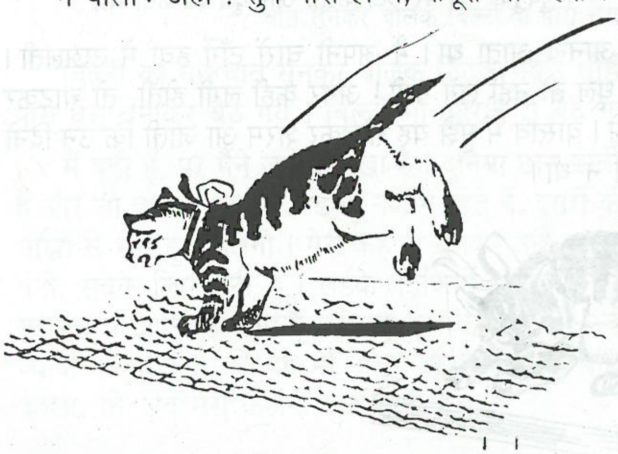
मेरे पैदा होने के चालीसवें दिन की बात है। मेरी माँ चूहे ढूँढ़ने बाहर चली गयी। हम चारों भाई-बहन घर में बिस्तरों पर अकेले रह गये। हमारी माँ हमसे कह गयी थी कि "कहीं जाना नहीं। यहीं बिस्तर पर लेटे रहना। जब तक मैं न आऊँ, यहाँ से बिलकुल न हिलना।" लेकिन माँ के जाते ही मेरे मन में आया कि यह पता लगाना चाहिए कि अम्मा जाती कहाँ है? और चूहे कहाँ से लाती है? कपूरी जीजी मेरे ही पास लेटी थी। मेरी बहन का नाम 'कपूरी' था।



हमारी माँ हमसे कह गयी थी कि कहीं जाना नहीं।

कपूरी बड़ी भली थी। मुझ जैसी चंचल न थी। मैंने उससे बाहर जाने की बात कही। सुनकर वह बोली "अम्मा मना कर गयी है।" यह कहते-कहते उसने अपना सफेद पंजा मेरे काले पंजे पर रख दिया। आँख दिखाकर बोली: "जब तक अम्मा न आ जाय, यहाँ से हिलना भी नहीं।" कपूरी ने आगे कहा: "मेरा मतलब है, मैं यहीं रहूँगी। यहीं धोऊँ-पोछूँगी। तुम्हें भी ऐसा ही करना चाहिए।"

मैं बोली: अहो! तुम गोरी हो न, कपूरी जो ठहरी। तुम तो काली हो जाओगी न? तुम लेटी रहो यहीं। मैं तो काली हूँ। हर दम साफ हूँ। मुझे धोने-पोंछने की जरूरत नहीं। मैं तो जब सोयी थी, ऐसी ही थी, जैसी अब। मैं तो एक-दो जगह चाटकर साफ-सुथरी बन गयी हूँ। मुझे तो दुनिया गोरी बनने को कहे, तो न बनूँ। तुम गोरी हो, तुम्हें मैली हो जाने का डर है। तुम कपूरन मेरे साथ मत आओ। गप्पू-सप्पू सोये ही हैं। मैं तो अकेली ही जाती हूँ। मैं तो बाहर निकल कर बाहर की सैर करूँगी ही।"



थोड़ी ही देर में मैं सँभल गयी और चल पड़ी।

यह कहते-कहते मैंने कपूरी के पंजे से अपना पंजा छुड़ा लिया। बिस्तर से कूद गयी। अपने जीवन में पहली बार घास के ढेर पर से फर्श पर छलाँग मारी। जहाँ मैं पैदा हुई थी, वह खलिहान की कोठरी थी। फर्श मेरे पैरों को चिकना और ठंढा लगा। पहले पहल ऐसा मालूम हुआ कि अब पाँव फिसले, अब पाँव फिसले। थोड़ी ही देर में सँभल गयी।

मेरी पीठ ऊपर हो गयी, पाँव फर्श पर जम गये। मुझे मालूम हुआ कि मैं चल सकती हूँ। मैं चल पड़ी और दरवाजे पर जा पहुँची।

मुझे तब दरवाजे का कुछ ज्ञान न था। मैंनें और मेरे भाई-बहन सबने यही समझा था कि बस, हमारी दुनिया इतनी ही है। दरवाजा बन्द था। मैं न बाहर जा सकती थी, न ऊपर चढ़ सकती थी। मैंने दरवाजे को सूँघा। उसे अपने पैरों से टटोला। अपनी पीठ से उसे मला, पर सब बेकार। दरवाजा बन्द था। वह न हिला न डुला और न निकलने की कोई राह मिली।

मैं पकड़ी गयी

:३:

मैं खिसियानी-सी रह गयी। मुझे बड़ा गुस्सा आया। अगर मेरी दुनिया इतनी ही है, तो इसका सोच भी क्या? इससे तो अपना बिस्तर ही अच्छा। मैंने सोचा, चलो, अपनी जगह लौट चलूँ कि कपूरी की याद आ गयी और सोचने लगी कि वह क्या कहेगी? वह मेरी हँसी उड़ायेगी। मुझे पंजा दिखा-दिखाकर कहेगी, "ले और जा- और जा। आयी न अब अपना-सा मुँह लेकर।" कपूरी खूब बनेगी और अपनी बुद्धिमानी की शेखी बघारेगी। कहेगी, मैंने रोका, न रुकी।



मैं दरवाजे के पास बैठ गयी और जोर-जोर से बोली–'म्याऊँ'।

मैंने थोड़ी देर सोचा। इस नतीजे पर पहुँची कि एक काम और करना चाहिए। अगर वह कोशिश बेकार गयी, तब बिस्तर पर लौटने की बात सोचूँगी। मैं दरवाजे के पास बैठ गयी और जोर-जोर से बोली म्याऊँ।' एक बार, दो बार, तीन बार और फिर एकदम दरवाजा खुला और प्रकाश का झझूका-सा मेरी आँखों के सामने आ गया। मैंने डर से आँखें बन्द कर लीं और पीछे की ओर भाग गयी। एक-दो पग ही धरे होंगे कि मेरे कान में आवाज पड़ी। हाँ, हाँ, मैंने पक्की तरह आवाज सुनी थी। 'मुन्नू, बिल्ली, बिल्ली। पूसी, पूसी'। जैसे ही ये शब्द सुने, मैंने अपने मन को पक्का किया। मन ही मन बोली, अब मेरी बारी है। अब मैं दुनिया को देखूँगी और इस बात का पता लगाकर रहूँगी कि चूहे कहाँ मिलते हैं? फिर आनन्द ही आनन्द है। मैं हिम्मत के साथ किवाड़ पर चढ़ गयी। मेरी छाती खुशी से फूली हुई थी। मेरा सिर घमण्ड से भरा था।

मैं यह ठीक-ठीक जान भी न पायी कि मैं हूँ कहाँ, कि इतने में किसीने मुझे पकड़ लिया और किवाड़ से खींच लिया। दो कठोर चीजों के बीच में मैं इस बुरी तरह भिच गयी कि मेरा दम घुटने लगा। मुझे मालूम होने लगा, जैसे अब मरी, अब मरी। मेरे मुँह से निकल गया–अरी मेरी मैया! मेरा गुदगुदा बिस्तरकहाँ है? मेरी कपूरी बहन कहाँ? मेरे गप्पू-सप्पू भैया कहाँ हैं और मेरी प्यारी अम्मा, तुम कहाँ हो?



मैं तो डर के मारे अधमरी हो गयी थी।

किस काम की ये नीली आँखें, किस काम के ये काले पट्टे और किस काम की ये काली टाँगें ! इनमें से कोई भी चीज मुझे घर नहीं पहुँचा सकती। मैंने शक्तिभर जोर लगाया, खरोंचा, काटा और ज्यों-त्योंकर सिर बाहर निकला। लेकिन सब बेकार। दो कठोर चीजों ने फिर मसोसा और दबाया और मुझे लेकर चल दीं पता नहीं कहाँ के लिए। मैं तो डर के मारे अधमरी हो गयी थी।

नयी जगह

:४:

इतनें में ही मुझे एक प्यारभरी मीठी आवाज सुनाई दी। अरे मुन्नू ! बेचारी पूसी को दुःख हो रहा होगा। उसका दम निकल जायगा। उसे इतने जोर से न पकड़ो।

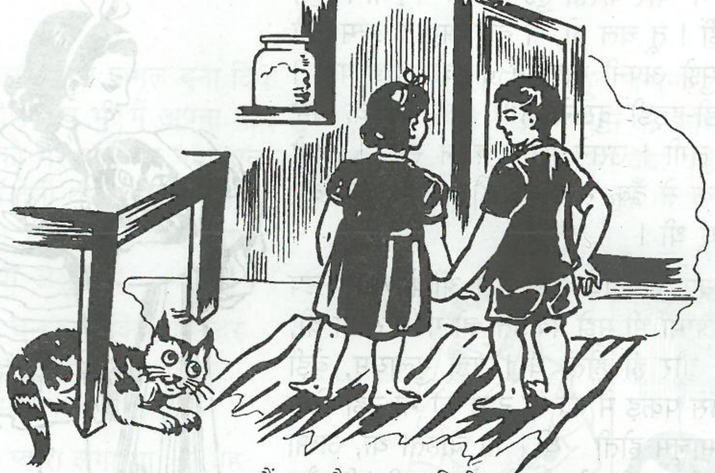
और फिर मेरे सिर पर से एक भर्रायी हुई आवाज उड़ती हुई–सी सुनाई दी। वह यह थी कि अगर मैंने ढीली छोड़ी, तो मेरे हाथ से कूदकर भाग जायगी। मैंने इसे जरा भी दम लेने दिया, तो यह मेरा मुँह खरोंच लेगी।

एक बार फिर प्यारी आवाज आयी। सुन मुन्नी पूसी, सुन मुन्नी किट्टी, आ, तुझे दूध पिलाऊँ। चल, अन्दर चल। दूध पीकर न यह भागने की सोचेगी और न खरोंचने की।

यह सुनकर मै बड़ी खुश हुई। थोड़ी देर में मैं छूट गयी और धरती पर आ गिरी। दो कठोर चीजों ने मुझे बहुत दुःख दिया था। उन दोनों ने छोड़ने से पहले मेरी गर्दन की खाल पकड़ रखी थी।

जब मुझे मालूम हुआ कि मैं कहाँ हूँ, तब मुझे पता लग गया कि यह खलिहान नहीं है। यहाँ का फर्श

मुलायम है । मेरे पैरों को भला लगता नहीं है । पर यहाँ तरह-तरह की चीजें रखी थीं । ऐसी-ऐसी, जो मैंने पहले कभी नहीं देखी थीं । मुझे वे भली नहीं लगीं । इतनी ही अच्छाई थी कि मैं उनमें से एक-दो के नीचे छिप सकती थी । और एक के नीचे मैं झट दौड़कर जा छिपी ।

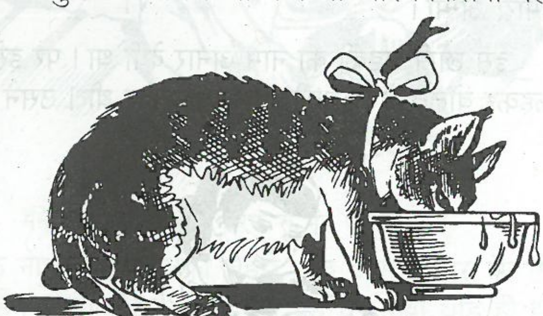


मैं झट दौड़कर जा छिपी।

मैं फिर पकड़ी गयी :५:

थोड़ी देर में मुझे आवाज सुनाई दी। यह एक लड़की की आवाज थी । वह गा-गाकर कह रही थी, पूस-पूस-पूसी। पर मैं अपनी जगह से जरा न हिली। मैं कुर्सी के नीचे छिपी बैठी थी और निकलना नहीं चाहती थी । लड़की कभी कमरे के अन्दर आती, कभी बाहर जाती। एक बार बाहर जो गयी, तो एक कटोरी में कुछ ले आयी। कटोरी, कुर्सी के पास रख दी, जिसके नीचे मैं छिपी बैठी थी। लड़की बाहर चली गयी।

अब मेरा मन न माना। मैं भूखी तो थी ही। मेरी नाक ने मुझे और भूखा बना दिया। नाक बोली, दूध है दूध । मैं उछल पड़ी। एक ही छलाँग में कटोरी के पास पहुँच गयी। थोड़ी ही देर में सारा दूध चट कर गयी। मैं कटोरी चाट रही थी कि फिर आवाज सुनाई दी । सँभलूँ, सँभलूँ कि मेरी गर्दन किसी की पकड़ में आ गयी । मैंने दौड़ने की कोशिश की, पर पकड़ काफी मजबूत थी। बच्चों, यह कहते हुए मुझे दुःख होता है कि मैं जल्दी-जल्दी में इतना दूध पी गयी कि मुझे साँस लेने में कठिनाई मालूम हो रही थी । बल लगाने के लिए बल ही नहीं रह गया था । अगर मैंने लालच न किया होता, थोड़ा कम दूध पिया होता, तो मैं जरूर पकड़ से छूट सकती थी । क्योंकि इस बार की पकड़ छोटी लड़की की पकड़ थी, लड़के की नहीं । लड़की की बाँहें इतनी बलशाली नहीं होतीं, जितनी लड़कों की । लड़कियों की दबाइश मुलायम होती है, लड़कों की कड़ी ।



थोड़ी ही देर में सारा दूध चट कर गयी।

अन्नो और उसकी अम्मा

छोटी लड़की बड़ी दयालु थी । उसने मुझे पकड़ते ही पुचकारा । मीठे सुर में प्यार करती हुई बोली : ''मुन्नी किट्टी, मैं तुझे सताऊँगी नहीं । तू चल तो, मैं तुझे अपनी अम्मा को दिखाऊँगी ।'' वह मुझे अपनी बाहों में दबाकर दौड़ पड़ी । दौड़ते ही मेरी हड्डी-हड्डी दुखने लगी । मैं दर्द के मारे 'म्याऊँ-म्याऊँ करने लगी । उसने मेरी एक न सुनी । उसने मेरा सिर अपनी फ्राक से ढँक रखा था और मैं ज्यों-त्यों कर अपने क़ो सँभाले हुए थी ।



वह मुझे अपनी बाँहों में दबाकर दौड़ पड़ी।

मुझे अम्मा की याद आ गयी और मेरी आँखों से टप-टप आँसू टपकने लगे। अम्मा भी मुझे पकड़ती तो गर्दन से ही थी, पर वह पकड़ कुछ और ही होती थी। बड़ी मुलायम, बड़ी आनन्द देनेवाली! उस पकड़ में दर्द तो नाम को भी नहीं होता था। उलटे गुदगुदी मालूम होती थी। जी चाहता था, अम्मा ऐसे ही लटकाये फिरे। यही सोचते-सोचते लड़की की दौड़ खतम हुई और वह एकदम चिल्ला पड़ी : ''अम्मा-अम्मा, देख! मैं क्या लायी हूँ। श्यामू दद्दा को यह खलिहान में मिली थी। उन्होंने मुझे दे दी।'' उतर-उतर री पूसी और देख, ये हैं हमारी अम्मा।

इस छोटी लड़की का नाम अनार देवी था। पर इसे अन्नो कहकर बोलते थे। इसकी माँ बहुत दयालु थी। उसने मुझे बहुत प्यार से देखा। बोलीं ''अरे, यह तो बड़ी सुन्दर पूसी है। यह तो मेरी सुन्दरी की बेटी मालूम होती है। मेरी सुन्दरी सचमुच बड़ी सुन्दर है। जो उसे देखे, देखता रह जाय। इस पूसी की शकल उसीसे मिलती है।''



आज से तुम चन्द्रमुखी !

मैं यह शब्द सुनते ही फूल उठी। फर्श पर बड़ी अदा के साथ टहलने लगी। मानभरी बोली निकालने लगी। यह दुःखभरी 'म्याऊँ-म्याऊँ न थी। शानभरी सुरीली ध्वनि थी। मैंने शक्तिभर अन्नो की माँ की बात को सही सिद्ध करने की कोशिश की।

इतने में अन्नो कुमारी बोल पड़ी : ''अम्मा, इसका नाम क्या रखें ? सुन्दरी नाम अच्छा है। और यह सुन्दर है भी। सुन्दरी ही नाम सही। हाँ अम्मा, पर तुम कहती हो कि सुन्दरी तो

तुम्हारी पूसी थी, तब इसका नाम चन्द्रमुखी सही।'' यह कहकर अन्नो कुमारी ने दोनों मुलायम हाथों में मेरा सिर लेकर मुझे चूमा और लाड़भरी आवाज में कहा : पूसी-पूसी, आज से तुम चन्द्रमुखी हो।'

नया नाम :७:

चन्द्रमुखी नाम ने मुझे पागल बना दिया। चन्द्रमा का पागलपन से बहुत सम्बन्ध है। यह बात मेरे लिए सच निकली। जब भी मैं अपना नाम सुनती, फूल उठती। अपने नाम को सोच-सोच मैं कहती कि अगर गप्पू-सप्पू को मेरे नाम का पता चल जाय, तो वे क्या कहेंगे ? कपूरी क्या कहेगी, जो मुझे बिस्तर से उतरने ही नहीं देती थी। अगर मैं उसका कहना मान लेती, तो आज न यह नाम मिलता, न यह जगह देखने को मिलती। न कोई जान पाता कि मैं सुन्दर हूँ या असुन्दर।


मैंने अन्नो की माँ की तरफ से मुँह फेर लिया।

बच्चो सोचो, चन्द्रमुखी कितना सुन्दर नाम है। तुममें से हरएक का जी होता होगा कि यह नाम तुम्हारा होता।

मुझे भी नाम प्यारा लगा था। मैं यह समझती थी कि जब मैं वैसी हूँ, तब ही तो मुझे वैसा नाम मिला। जिसने मेरा नाम रखा, उसने मुझ पर अहसान क्या किया? यह सोचकर मैं फूल उठती। मेरा सिर शेर की तरह ऊँचा उठ जाता और यही हाल मेरी पूँछ का होता। मुझे ऐसा मालूम होने लगता कि सचमुच मैं शेर की मौसी होने योग्य हूँ। मैं अपने को रानी समझती थी, रानी! अब सोचो, मुझे कैसा लगा होगा, जब अन्नो की माँ अन्नो से बोली : ''नहीं-नहीं, चन्द्रमुखी इसका ठीक नाम नहीं। इसका चेहरा गोल है सही, पर रंग तो चन्द्रमा जैसा नहीं है। हाँ, इसके बाल बड़े मुलायम हैं। काली-कलूटी है। इससे यह चन्द्रमुखी थोड़े ही हो सकती है।''

मैं यह सुनते ही आगबबूला हो उठी। मैंने अन्नो की माँ की तरफ से मुँह फेर लिया औरं थू-थू करके मैंने पीठ फेर ली। मेरे बिस्तर के पास जब कोई आता, तो मेरी अम्मा भी ऐसा ही किया करती थी। उसके रहते कोई हमारे पास नहीं फटक सकता, कोई हमको जली-कटी नहीं सुना सकता था। हम सब भाई-बहनों की आबरू का बड़ा सवाल था। अपनी आबरू का भी ख्याल था। बच्चो, पर सोचो तो कहाँ मेरी बूढ़ी अम्मा कहाँ चार बच्चोंवाली माँ, कहाँ वह दुनिया देखी ममी और कहाँ मैं चालीस दिन की पूसी। मैंने अपनी अम्मा की नकल करके भूल की। बच्चो, तुम ऐसी भूल मत करना। नहीं तो मेरी तरह पछताना पड़ेगा।

अन्नो कुमारी अम्मा की बातों में आ गयी और एकदम चिल्ला पड़ी, ''ठीक-ठीक, चन्द्रमुखी नहीं,



अन्नो कुमारी ने मेरा नाम मखमली रख दिया।

इसका नाम मखमली अच्छा रहेगा। यह मखमल जैसी मुलायम है न अम्मा ? बस, मेरे मखमल के तकिये जैसी है। और अम्मा, यह लम्बी भी तो इतनी ही है और वैसी ही मुलायम है। पूसी, आज से तुम जीवित तकिया बन गयी। मखमली तुम्हारा नाम हो गया।''

अन्नो की अम्मा बोली : ''हाँ-हाँ बिलकुल ठीक। तुमने खूब सोचा। तुम्हें चाहिए कि तुम अपने जीवित तकिये का बहुत ध्यान रखो। उसे पीने को दूध दो, लेटने को बिस्तर।''

अपने नये घर में :८:

मैं इस नये घर में पूरे छह महीने रही। पूसी से बिल्ली बन गयी। इन छह महीनों में न मैं माँ से मिली, न भाइयों से और न अपनी बहन कपूरी से। मुझे उनकी याद भी नहीं आयी। बात यह थी कि मुझे हमेशा अपना ही ख्याल रहता था। दूसरों को मैं कुछ समझती ही न थी। मैं समझती थी कि दुनिया में मैं ही हूँ। मैं ही चालाक हूँ। मैं ही सुन्दर हूँ। मैं ही बलवान् हूँ। दूसरे मुझ जैसे नहीं।

मैं अपनी मालकिन, छोटी लड़की, अन्नो कुमारी को अक्सर यह कहते सुनते कि हमारी मखमली बड़ी खूबसूरत और बड़ी प्यारी है। उसकी शक्ल दर्शनीय है। कैसी बढ़िया आँखें हैं। कैसी झबरी पूँछ है। यह सुन-सुन मैं समझती थी कि न मुझ-जैसी बिल्ली कभी पैदा हुई, न है, न कभी पैदा हो सकेगी। बच्चो! याद रखो कि जहाँ तुमने एक बार अपने को बड़ा सोचना शुरू किया और अपने को ही सब कुछ समझा, वहाँ दूसरों के प्रति सारा प्यार रफू हुआ। यह मैं अपने अनुभव से कह रही हूँ। मैं तुम्हें बताना चाहती हूँ कि मेरे शेष दिन कैसे बीते। बस, खूब खाना, दूध पीना, मुलायम बिस्तर पर लेटे रहना और कभी जी में आया तो एकआध शिकार मार लेना। नहीं तो अन्नो कुमारी के साथ इधर-उधर घूमते फिरना। क्या कहूँ उन दिनों

की बात! दिन में खेल, रात में खेल। खेल ही खेल। आनन्द ही आनन्द। लेकिन क्या इस सबसे मेरी तबीयत भरी? बिलकुल नहीं। खेल और आनन्द, खेल और आनन्द। यही मन चाहता रहा। जरा-जरा बात में



खूब खाना, दूध पीना और अन्नो कुमारी के साथ इधर-उधर घूमना।

बिगड़ पड़ना। जरा मनचाहा न हो, तो रूठ बैठना। दूसरों को खरोंच लेना। लेकिन दूसरे तो यह बरदाश्त नहीं कर सकते। उनमें जान है। वे वहीं रहते हैं, जहाँ मैं रहती हूँ। उनको वे सब सुख मिलने ही चाहिए, जो मुझे मिले हुए हैं। यह बात मैं आज समझ पायी। उन दिनों कहाँ समझती थी? ●

चोरी-चोरी भाग निकली :९:

तुम यह जरूर कहोगे कि मुझे सन्तोषी बनकर रहना चाहिए था। सभी सुख तो मुझे प्राप्त थे। तुम यह सच कहते हो। पर उन दिनों कहते, तो मैं तुम्हें अपना दुश्मन समझती। लेकिन याद रखो, बिल्लियाँ कब ऐसा करती हैं, जैसा उन्हें करना चाहिए। लड़के-लड़कियाँ ही भला कब ऐसा करती हैं, जैसा उन्हें करना चाहिए? वे उमंगों के दिन होते हैं। मन में उमंग उठी और कर डाला। मैं यही सुनाने बैठी हूँ कि ऐसा क्यों होता है?

कुमारी अन्नो रोज सबेरे स्कूल चल देती। मैं उसके साथ नहीं जा सकती थी। अगर चलने की सोचती, तो मुझे लौटना पड़ता। इससे मेरा चित्त बिगड़ने लगा। अकेले-अकेले करती क्या? मन लगाऊँ, तो कैसे लगाऊँ?

एक दिन की बात है। मौसम बड़ा सुहावना था। वसन्त पंचमी का दिन था। स्कूल की छुट्टी नहीं थी।

अन्नो तो अपना बस्ता और सिलाई का झोला लेकर शाला चल दी। मैं अकेली रह गयी। मुझसे न रहा गया। मेरे मन ने तुरन्त सोच लिया, चोरी-चोरी क्यों न अन्नों के पीछे चला जाय। मैं वैसा ही कर बैठी। मैंने अपने जाने बहुत होशियारी की कि अन्नों मुझे न देख पाये। इसके लिए मैं कभी बहुत पीछे रह जाती और कभी दौड़कर उसके पास पहुँच जाती।

इतने में क्या हुआ कि अन्नो कुमारी एक हवेली के सामने रुक गयी। उसके द्वार पर कुछ सीढ़ियाँ बनी थीं। वह चढ़ी और बटन दबाकर उसने घंटी बजायी। मैं जहाँ की तहाँ ठिठक गयी। दरवाजा खुला। वह अन्दर चली गयी और मेरी आँखों से ओझल हो गयी। ●



वह मेरी आँखों से ओझल हो गयी।

दो लड़के मेरे पीछे दौड़ते हैं :१०:

मैं सड़क पर बैंठ गयी। अन्नो तो मुझे दिखाई नहीं देती थी। सोचने लगी, यहाँ तक आकर मूर्खता ही की। मैं अपने घर से बहुत दूर थी। मुझे अपने पर इतना भरोसा भी न था कि मैं लौटकर घर पहुँच सकती। इसलिए मैंने सोचा कि हवेली के द्वार तक ही क्यों न चला जाय। अब मैं यह भी जान गयी थी कि यही हवेली अन्नो कुमारी का स्कूल है। मेरे दरवाजा खटखटाने पर कोई-न-कोई द्वार जरूर खोल देगा। यह सोच मैं चल पड़ी और ड्योढ़ी में सीढ़ियों पर जाकर बैठ गयी।

बैठे-बैठे थक गयी। एक बार अपने-आप मेरे मुँह से आवाज निकल गयी, 'म्याऊँ'। परिणाम कुछ न हुआ। बसन्ती हवा के झोंकों ने मुझ पर जादू किया। मैं वहीं सो गयी। एक झपकी भी न ले पायी थी कि एक आवाज ने मुझे जगा दिया। आवाज पास से ही आ रही थी–अरे जीवन! देख, देख, वह बिल्ली कैसी मौज से सो रही है। चलो, इसे पकड़ें। बड़ी मौज रहेगी।



मैं सीढ़ियों पर जाकर बैठ गयी।

यह सुन मैं एकदम कूद पड़ी और डर गयी।



एक छलाँग मारी और आजाद

उन लड़कों के पास से दौड़ भागी । सड़क-सड़क दौड़कर एक दीवार पर चढ़ गयी और पास के पेड़ पर कूद गयी । होनहार, मेरे पंजों में एक रोड़ा फँसा हुआ था । उससे मेरा पाँव फिसल गया । मैं पीठ के बल सड़क पर गिर पड़ी ।

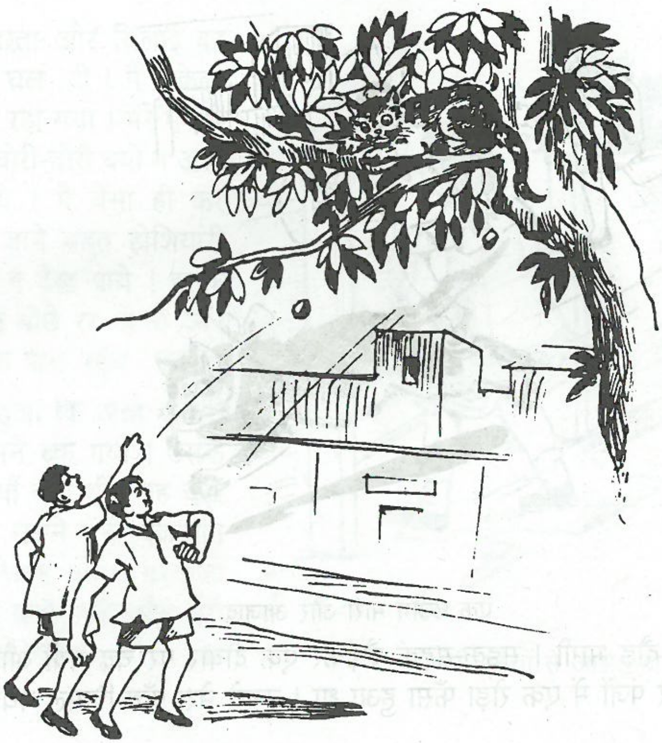
फिर पेड़ पर चढ़ी :११:

पैरों पर खड़े होते-होते मुझे लगा कि मैं फिर दो कठोर चीजों के बीच में कस ली गयी । इन चीजों का मुझे अनुभव हो चुका था । मैंने जान लड़ाकर जान लिया कि ये लड़के के हाथ हैं । यह सोचकर कि अब जान गयी, मुझमें न जाने कहाँ से बेहद बल आ गया । एक पंजा गड़ा ही दिया । मेरे नाखून उसके मांस में घुस गये । हाथ ढीले पड़े । एक छलाँग मारी और आजाद ।

सिर पर पैर रखकर भागी। भागते-भागते जोर की हँसी सुनायी पड़ी और पीछे-पीछे सुनाई पड़ी पास आती हुई दौड़ते हुए पैरों की खट-खट, पट-पट । अब क्या, ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की साँस नीचे । पाँव हो गये मन-मन भारी, मानो किसी ने बाँध दिये हों । जैसे ही मन में आया कि हार मान लूँ, वैसे ही सामने दिखाई दे गया एक पेड़ । हिम्मत आ गयी । उस पेड़ ने मुझे बचा ही दिया ।

यह पेड़ सेमल का था । खूब ऊँचा था । एक झपाटे में मैं उस तक पहुँच गयी । पलक मारते पेड़ के ऊपर, मानो किले में पहुँच गयी।

चुपचाप बैठ गयी । इतनी थकी और इतनी निर्बल कि हिलने-डुलने में असमर्थ । यहाँ तक कि जब 'सन्न' करता हुआ एक पत्थर मेरे पास से गुजरा, तो मैं हिली-डुली तो नहीं, पर मेरे रोंगटे खड़े हो गये।



सन्न करता हुआ एक पत्थर मेरे पास से गुजरा, तो मेरे रोंगटे खड़े हो गये।

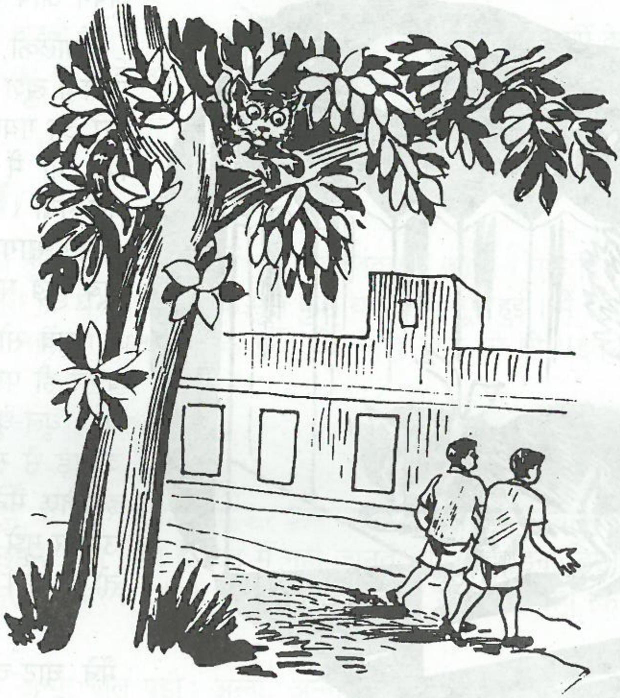
मेरा दिल धुक-धुक करने लगा। फिर मैं बेहोश-सी हो गयी।

मेरा किला :१२:

ठीक-ठीक तो नहीं बता सकती। दो लड़के मेरा पीछा कर रहे थे। उन्होंने जरूर पाँच-दस पत्थर मेरी ओर फेंके होंगे और बजरी भी फेंकी होगी। क्योंकि मुझे अपने बालों में थोड़ी बजरी मिली थी। सेमल के डोंडे भी जरूर गोलियाँ बने होंगे। पर मैं तो पेड़ के किले में सुरक्षित थी। उनके फेंके हुए पत्थर या डोंडे मुझे छू ही नहीं सकते थे। मैं बहुत ऊँचे पर थी। मेरे और बालकों के बीच में कई डालियाँ भी थीं। इससे मेरा किला और भी सुरक्षित हो गया था। मुझे उन बालकों की आवाज तो सुनाई पड़ती थी, पर बस आवाज ही। उन्होंने क्या-क्या बका, यह कुछ पता नहीं।

जरा होश आया, तो मैंने अपना एक कान किले के बाहर किया। बस, उनके पैरों की खटपट सुनायी दी, जो धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। घंटेभर मैं चुपचाप बैठी रही। मुझे डर था कि कहीं लड़के दलबल सहित घर लौट न आयें। जब मुझे पूरी तसल्ली हो गयी कि अब कोई नहीं लौटता, तो मैं अपनी खेत से बाहर निकली। इधर-उधर निगाहें फेंकी। मैं दो शाखाओं के बीच में बैठी थी। वे शाखाएँ पत्तों से लदी थी।

अपने को इतनी ऊँची जगह देखकर मैं दंग रह गयी। मैं समझ ही नहीं पायी कि मैं छोटी-सी बच्ची इतनी ऊँची चढ़ कैसे गयी। अब उतरूँ तो कैसे? प्यारे बच्चो! यह तब का हाल है, जब मैं बहुत छोटी थी। इससे पहले मैं कभी पेड़ पर नहीं चढ़ी थी। मुझे तो यह भी पता न था कि बिल्लियाँ भी पेड़ पर चढ़



मैं पेड़ के किले में सुरक्षित थी ।

लेती हैं । पेड़ पर चढ़ना ही क्या, वे और अनेक काम ऐसे कर लेती हैं, जिन्हें लड़के-लड़की नहीं कर सकते ।

घर लौटी

:१३:

खैर, मैं ज्यों-त्योंकर पेड़ से उतरी। अब सूरज सिर पर आ गया था। खूब परिश्रम कर चुकी थी। लगी जोर की भूख । घर का रास्ता मालूम नहीं । यह भी नहीं मालूम कि शाला किधर है । लड़कों से बचकर भागते-भागते इतनी दूर आ पहुँची थी कि मैं जान ही न सकी कि मैं थी कहाँ ? अब क्या करती ? लगी पक्षियों की ओर पंजे फेंकने। भला वे मेरे क्या हाथ आते ? मैंने अपने-आप कभी चूहा भी नहीं पकड़ा था। पक्षी की तो बात ही क्या! बहुत छोटी थी, तो अम्मा की लाडली रही; बाहर निकली, तो अन्नो रानी अम्मा बन बैठी । अब न यह सूझे कि पेट कैसे भरा जाय और न यह समझ में आ रहा था कि घर कैसे पहुँचा जाय !

कुछ भी खाने को न मिला । भूखी ही चल पड़ी । चलती रही, चलती रही । सूरज डूबा । अँधेरा हुआ। तारे निकले । रात हो गयी । बड़ा बुरा लगा । उदास हो गयी। दुःखी थी । मन ही मन बोली। –अगर आज सुरक्षित घर पहुँच जाऊँ, तो फिर कभी अन्नो की मरजी के बिना बाहर नहीं निकलूँगी ।

इतना सोचा ही था कि मेरी समझ में आ गया कि मैं कहाँ हूँ । हाँ, यही तो देखा हुआ लाख का ढेर है । यही तो भूस की बुरजियाँ हैं । यही जाना-पहचाना खेत का फाटक है । अब क्या था ! अब तो पाँव



मैंने चाट-चाटकर अपने को साफ कर लिया।

अपने आप रास्ता बताने लगे।

बालको, सोचो तो उस वक्त मैं कितनी खुश हुई हूँगी। तुरंत घर का द्वार आ गया। पर वह बन्द मिला। फिर भी मैं अपना सारा दुःख-दर्द भूल गयी। बचकर निकल आने के आनन्द-सागर में डूब गयी! यानी खूब सुख माना।

सब सोये हुए थे। सुबह तक बाहर ही पड़ी रही। मेरा बुरा हाल था। धूल-धूसरित हो रही थी। पाँव कीचड़ से सने थे। बाल खड़े थे। इसलिए मैंने सोचा कि कोई सबेरे उठकर मुझे देखे, इससे पहले मैं साफ तो हो लूँ।

दरवाजा खुलते-खुलते मैंने चाट-चाटकर अपने को साफ कर लिया। सब बाल चिकने कर डाले। उन्हें सुखा लिया। चमका लिये। पंजे पर निगाह गयी, तो एक नाखून गायब था। पता लगा, उसे गँवा बैठी। उसकी पूर्ति तो किसी तरह नहीं की जा सकती थी। खैर नाखून को देखता ही कौन है। मुझे डर था अपनी पूँछ का, जिसके बहुत से बाल लड़कों ने खींच-खींचकर उखाड़ लिये थे। क्या वे फिर कभी उग पायेंगे? मेरे सिर पर घमण्ड सवार था। मैं सारा दुःख भूल गयी। पूँछ के बालों के सोच में पड़ गयी। क्योंकि उनके बिना सुन्दरता को बट्टा लगता था।

नींद तो मुझे आ गयी थी, पर जैसे ही मैं जागी, मेरे कान में आवाज पड़ी: 'मखमली, मखमली, तुम इतने घंटों रही कहाँ?'' यह आवाज थी अन्नो रानी की। उन्हें मेरे कारण रात को नींद नहीं आयी थी। जल्दी ही उठ बैठी थी। मैं उनकी ओर दौड़ पड़ी। उन्होंने मुझे चट उठा लिया, बड़े प्यार से गोद में लिया, पुचकारा,



मैं उनकी ओर दौड़ पड़ी।

छाती से लगा लिया।

आनन्द से फुर-फुर करती हुई मैं मन ही मन बोली, अपने घर में अपने प्यारों के साथ होना भी कितना सुखदायी होता है। अपनों के चारों ओर घूमने-फिरने में जो आनन्द आता है, वह बाहर घूमने में कहाँ?

मेरा स्वार्थीपन :१४:

मैं जब दो बरस की हुई, तो मेरे जीवन में एक बड़ा बदलाव आया। एक दिन की बात है। मैं अन्नो के साथ घूमने गयी। जैसे ही घर में आयी कि मुझे कुछ थकान मालूम हुई। मैं झपकी लेने के लिए कंबल पर लेट गयी। मैं सोयी नहीं थी, पलकें झपक गयी थीं। नींद आने को थी। इतने में अन्नों और उसकी अम्मा कमरे में आयीं।

अन्नो बुरी तरह रो रही थी। जैसे ही उसकी नजर मुझ पर पड़ी, उसने मुझे उठा लिया, अपनी गोद में ले लिया। सुबक-सुबककर रोने लगी। आँसू पर आँसू टपककर मुझ पर गिरने लगे। सुबक-सुबककर बोली: "मेरी प्यारी किट्टी, मैं तुझे अकेली छोड़कर कैसे जाऊँ? मुझसे तेरा बिछुड़ना न सहा जायगा।" मैं दो बरस की थी, बिछुड़ना क्या होता है, यह मैं नहीं जानती थी। बिछुड़ना-बिछोह जैसे शब्द हमने सुने ही न थे। मैं तो बस फुर-फुर करती रही। हाँ अपने कान जरूर खड़े कर लिये कि देखूँ, अन्नो और क्या कहती है।

इतने में अन्नो की अम्मा बोल पड़ी: अन्नो, अन्नो, मखमली के बिछोह का दुःख तो मुझे बहुत है,



अब मैं समझी कि मैं शाला जा रही हूँ।

पर तुम तो जानती ही हो कि बाहर जाते समय पूसी को कैसे ले जायँ। चलो इसे तुम्हारी शाला में छोड़ देते हैं। वहाँ यह बहुत खुश रहेगी। सबके साथ मौज करेगी। वह जगह इसके लिए सबसे अच्छी रहेगी। प्यारी अन्नो अब तुम अपने आँसू पोंछो और मेरे साथ चलो। हम मखमली को साथ लिये चलते हैं। वहीं किशोरियों के साथ इसे छोड़ देंगे।

अब मैं समझी, मैं शाला जा रही हूँ। और वहीं किशोरियों के साथ रहा करूँगी। खैर, यह तो अच्छा ही रहेगा। वहाँ यहाँ से बढ़िया खाने को मिलेगा। शायद वे मेरी गर्दन का पट्टा भी बदल देंगी। यह मैला-सा हो गया है, मुझे अच्छा नहीं लगता।

ये थे मेरे विचार, जो घर-बदलाव के समय मेरे मन में आये। ये कितने बुरे थे! निरे स्वार्थी, पूरे लालच से भरे, एकदम निकम्मे।

कुमारी लक्ष्मीरानी और रमारानी :१५:

मैं अन्नो और उसकी माँ के साथ चल पड़ी। जल्दी ही शाला पहुँच गयी। अन्नो रानी मुझे गोद में लिये थी। किशोरियों को समझाती रहती थी कि वह मुझे कसकर पकड़े। यह कहती-कहती वह मुझे अन्दर ले गयी। वहाँ थोड़ी देर बैठी। इतने में छोटी-छोटी लड़कियाँ आयीं। उनमें से एक ने मेरी मालकिन के



उनमें से एक ने मेरी मालकिन के हाथ से मुझे ले लिया।

हाथ से मुझे ले लिया और लगी मुझे पुचकारने और लगी जीभर मेरी तारीफ करने। थोड़ी बातचीत के बाद अन्नो बोली, "हम बाहर जाते समय मखमली को यहीं छोड़ जायेंगे।

मेरी नयी मालकिन मुझे पकड़े हुए थी। इतने में अन्नो ने मुझे प्यार किया, नमस्ते किया और डबडबायी आँखों से और भरे गले ही मुझसे बिदा ली। अन्नो से बिछुड़ते समय मुझे भी दुःख हुआ। जैसे ही वह कमरे से बाहर हुई, मैंने कूदकर उसके साथ-साथ जाने की कोशिश की। मुझे डर है, जरूर उन मुलायम हाथों को मेरे पंजों से खुरच आ गयी होगी, जो मुझे गोद में लिये हुए थे। लेकिन उन हाथों ने मुझे छोड़ा कब ? और बच्चो ! मैं नयी-नयी और बढ़िया चीजें देखकर जल्दी ही अपनी मालकिन अन्नो रानी को भूल गयी।



एक बार मैंने उन पर हाथ मारा।

इन नयी मालकिन में से एक का नाम था कुमारी लक्ष्मी और दूसरी का नाम था, कुमारी रमारानी। कमरा वही शाला का कमरा था, जहाँ वे पाठ पढ़ती थीं। इस कमरे में मुलायम ऊनी गलीचा बिछा था। उस पर चमकदार फूल बने हुए थे। सफेद और लाल गुलाब बने हुए थे। मैं तो उन्हें असली फूल समझ बैठी। पर जल्दी ही मुझे अपनी भूल मालूम हो गयी। वहाँ और तरह-तरह की चीजें थीं। वे देखने में बड़ी अच्छी लगती थीं। सारा कमरा मेरे लिए तमाशा था।

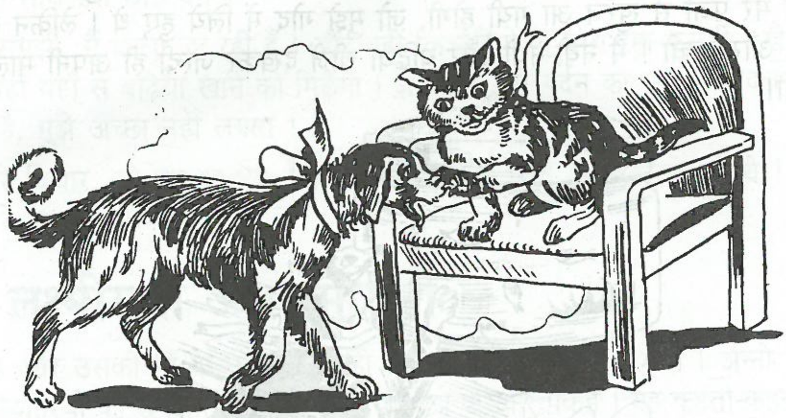
शीशे की एक बहुत बड़ी बरनी थी। उसमें पानी भरा था। पानी में छोटी-छोटी मछलियाँ चमक रही थीं। कुछ चमकीले लाल रंग की थीं। कुछ सफेद रंग की। मेरी बड़ी अच्छी खुराक थी। पर ये मेरी पहुँच के परे थीं। एक बार मैंने उन पर हाथ मारा। इसके लिए मुझे जोर की फटकार खाने को मिली। इतना ही नहीं, मैं सजा के तौर पर बन्द कर दी गयी।

शेरू :१६:

सबसे बड़ी तकलीफ यह थी कि मुझे चैन न मिलता था। जल्दी-जल्दी क्रोध हो आता था। यह यों कि वहाँ एक कुत्ता था। यह कुत्ता एकदम काला था। इसके बाल लम्बे-लम्बे और घुँघराले थे। बहुत जोर से भूँकता था। इसकी आँखें डरावनी थीं और बड़े-बड़े सफेद दाँत थे। इसका नाम था 'शेरू'।

पहले-पहले इसे जब मैंने देखा, तो मैं कुर्सी पर झपकी ले रही थी। रमारानी और लक्ष्मी खेल में मस्त

थीं। यह दानव मेरी कुर्सी तक आ पहुँचा। इसकी साँस मुझे अपने चेहरे पर मालूम हुई। मैंने अपनी पीठ ऊँची कर ली। सारे बाल खड़े कर लिये। उसकी ओर कर दिया थू..। उसने कुछ परवाह ही न की। उल्टे अपनी ठंडी गीली नाक मेरे अगले पंजे पर रख दी।



मैंने उसकी नाक पर एक खरोंचा मारा

यह तो हद हो गयी। मुझसे सहन न हुआ। मैं उसकी ओर झपटी। मैं उनकी नाक पर एक खरोंचा मारा। मुझे विश्वास है, वह इसे बहुत दिनों तक नहीं भूला होगा। मैं फिर एक मेज के नीचे जा छिपी। मेरी पूँछ क्या थी, लंगूर की पूँछ थी। मामूली तीन पूँछों जितनी। इतने में रमारानी बोल पड़ी, ''शेरू, तुम्हें शरम नहीं आती ? तुम साथियों के साथ अच्छा बर्ताव करना नहीं जानते। कमरे से बाहर निकल जाओ।''

कुमारी लक्ष्मी बोल पड़ी, ''अरे, यह बिचारा शेरू मखमली को सताना नहीं चाहता था। वह तो दोस्ती करना चाहता था।'' फिर पुचकारकर बोली, ''मेरे प्यारे शेरू, मेरे अच्छे शेरू, इधर आओ। क्या तुमसे मखमली रानी बिगड़ पड़ीं रूठ गयीं या नाराज हैं ?''

उसकी बहन रमा बोली, ''अच्छा-अच्छा, आज से शेरू तुम्हारा हुआ और मेरी अपनी मखमली बिल्ली। मैं उसको सबसे ज्यादा इसलिए प्यार करती हूँ कि वह बड़ी मुलायम है और बड़ी भोली-भाली।''



आज से शेरू तुम्हारा हुआ और मखमली मेरी।

लक्ष्मी बोली, ''मैं शेरू को सबसे ज्यादा प्यार करती हूँ।'' बस, उस दिन से हम दोनों का बँटवारा हो गया। मैं रमा की बिल्ली बन गयी। सचमुच वह बहुत भली थी। उसने मेरे दिल में अन्नो की खाली जगह को भर दिया था। मैं अपनी पुरानी मालकिन को एकदम भूल बैठी।

बालक-बालिकाओ ! मैं समझती हूँ, तुममें से किसी के पास भी मेरा-सा बुरा हृदय न होगा। बिल्ली में यही सबसे बुरी बात है, 'आँख से ओझल, तो मन से ओझल।' लेकिन बिल्ली के बच्चे में तो यह बहुत बुरी बात है।

●

दिल्ली का हाल सुना :१७:

मैंने अक्सर बच्चों को देखा है कि जहाँ उन्होंने किसी बूढ़े को देखा और छेड़ना शुरू किया। यही बात वह अजनबी आदमियों के साथ करते हैं। अगर ऊँट पर बिल्ली बैठ जाय, तो बच्चों के लिए तमाशा है। यह है तो बुरी बात, पर सब बच्चे ऐसा ही करते हैं। वह मूर्खता की नहीं, बुद्धिमानी की भी हो सकती है। उन्हें यह पता नहीं कि अचरज मूर्खों को ज्यादा है, बुद्धिमानों को बहुत कम। हाँ, तो यह पाठ मैंने कैसे सीखा, उसका हाल सुनो।आज से शेरू तुम्हारा हुआ और मखमली मेरी।

शहादरे की शाला में मैं तीन महीने रही। खूब मोटी हो गयी। बेहद आलसी बन गयी थी। एक दिन क्या सूझा कि मैं वहाँ पहुँच गयी, जहाँ शाला में बालक पढ़ रहे थे। वहाँ एक अजब बात देखी। शाला की गुरानी सरला रानी सामान बाँध रही थीं और दोनों लड़कियाँ उनके काम में उनकी सहायता कर रही थीं। कालीन के ऊपर एक ढेर-सा लगा हुआ था। मेरे निकलने के लिए रास्ता ही न था। मुझे बड़ा बुरा मालूम हुआ। मुझे ऐसा मालूम हुआ कि मेरा निरादर किया जा रहा है। यह देख मैं अपनी कुर्सी पर जा बैठी। इधर-इधर नजर डालकर यह जानने की कोशिश करने लगी कि यह हो क्या रहा है ?

इतने में रमारानी बोली, ''दिल्ली जाने को तो मेरा बड़ा मन हो रहा है, पर एक ही बात है कि मैं जाना नहीं चाहती।''

उसकी बहन बोल उठी, ''वह कौन-सी बात है री रानी ?''

यह सुनकर मैं सोच में पड़ गयी कि यह दिल्ली क्या चीज है ? कोई तमाशा है, कोई बाग है या कोई मेला है ? है क्या ? वहाँ मैं क्यों नहीं जा सकती ?

बातों-बातों में लक्ष्मी ने कहना शुरू किया। दिल्ली में हम यह देखेंगे, वह देखेंगें। वहाँ बड़ी मौज रहेगी। भला मखमली का वहाँ क्या काम ? यह सुनकर मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैं मन-ही-मन बोली, तो मुझे शाला में अकेले रहना पड़ेगा। जब रमारानी मेरे पास मुझसे बिदा लेने आयी, तो मैंने आँखें बन्द कर लीं। ऐसे लेट गयी, मानो मैं गहरी नींद में हूँ। मन में सोचने लगी, मैं शाला में हरगिज नहीं रहने की। मैं दिल्ली जाऊँगी और जाकर रहूँगी। अगर ये दोनों बहनें मुझे छोड़कर चल देंगी, तो मैं इनके पीछे-पीछे हो लूँगी।

●

रास्ते में पूँछ मिली :१८:

दूसरे दिन मैं वहीं पहुँची, जहाँ कल गयी थी। वहाँ रमारानी सजधजकर खड़ी मिलीं। मैं समझी, ये घूमने जा रही हैं। पर वे तो लगीं पुचकार-पुचकार कर कहने, ''देख मखमली, मैं दिल्ली जा रही हूँ।

मैं चाहती तो यही थी कि तुझे साथ ले चलूँ, पर क्या करूँ वैसा नहीं कर सकती ।''

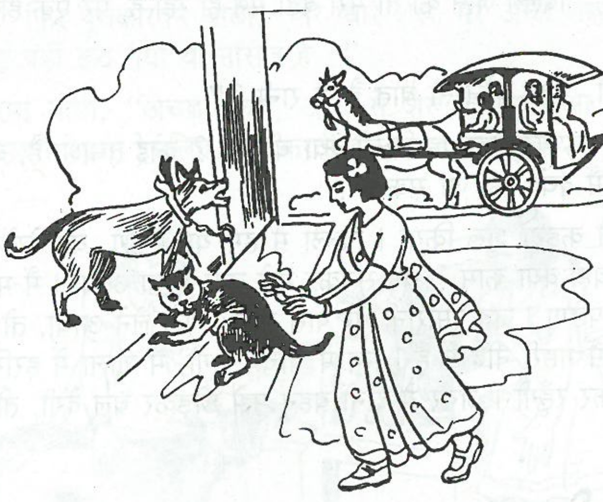
इस तरह समझा-बुझाकर मुझे फर्श पर छोड़ दिया और कमरे के बाहर चलने लगी । मैं थी मुँहलगी, मैं उसके पीछे-पीछे चल दी । जब उसने मुझे पीछे आते देखा, तो मुझसे पीछे लौटने को कहा । मैंने उसकी सुनी-अनसुनी कर दी । अब लगी वह मुझे झिड़कने । पर मैं अपने हठ से न टली ।



मैं भी पीछे-पीछे चल पड़ी

जैसे ही मैं शाला के दरवाजे पर पहुँची, तो वहाँ दिखाई दी सरला देवी और उनके पति । दोनों रमारानी से बोले, ''जल्दी करो रानी, जल्दी करो ।'' यह सुनकर मुझे एक चाल सूझी । जैसे ही रमारानी ताँगे में बैठी, मैं कूदकर उनकी साड़ी के नीचे जा छिपी । लेकिन बच्चो, मुझे अपनी पूँछ की याद ही न रही । पूँछ बड़ी अच्छी चीज है । बड़े काम की चीज है । लेकिन मैं तो यही कहूँगी कि कभी-कभी वह बड़ी निकम्मी चीज साबित होती है । बना-बनाया काम बिगाड़ देती है । मेरे साथ यही तो हुआ ।

सरला रानी खिलखिलाकर हँस पड़ी । बोली, अरे, अरे ! यह क्या ? इतने में लक्ष्मी रानी हँसती हुई बोलीं, अरे हाँ, ताँगे में पूसी की पूँछ कैसी ? साथ जो चलना चाहती है ।



मुझे सीढ़ी पर बिठा दिया और ताँगा चल पड़ा

बस अब क्या था, मुझे मालूम हुआ कि मेरी पूँछ किसी के हाथ में है । मैं बुरी तरह 'म्याऊँ-म्याऊँ' करने लगी । पर मेरी 'म्याऊँ-म्याऊँ' बेकार गयी । मैं अपनी जगह से खींच ली गयी । मुझे दरवाजे की सीढ़ी पर

बिठा दिया गया और ताँगा चल पड़ा। एक ही सन्तोष था कि शेरू भी दिल्ली नहीं गया था। वह भी जंजीर से बँधा भों-भों कर रहा था। जंजीर तुड़ाने में पूरा जोर लगा रहा था।

मैं अकेली रह गयी

:१९:

जब मैं अकेली रह गयी, तो मैं सीधी शाला के कमरे में पहुँची। आध घण्टे तक 'म्याऊँ-म्याऊँ' करती रही। इससे न मन ही बहला, न कोई काम ही सधा। इतने में ताँगेवाले की बूढ़ी अम्मा अन्दर आयी। उसे मैं पहचानती ही थी। उसे देखकर मेरा मन हरा हो गया। उसने मुझे गोदी में उठा लिया। बड़े प्यार से बोली, चल-चल, मैं तुझे अपने घर लिये चलती हूँ। जब तक रमारानी दिल्ली से न लौटे, तब तक तू मेरे पास ही रहना। मैं खुश-खुश बूढ़ी अम्मा के साथ चल दी।



उसने मुझे गोदी में उठा लिया

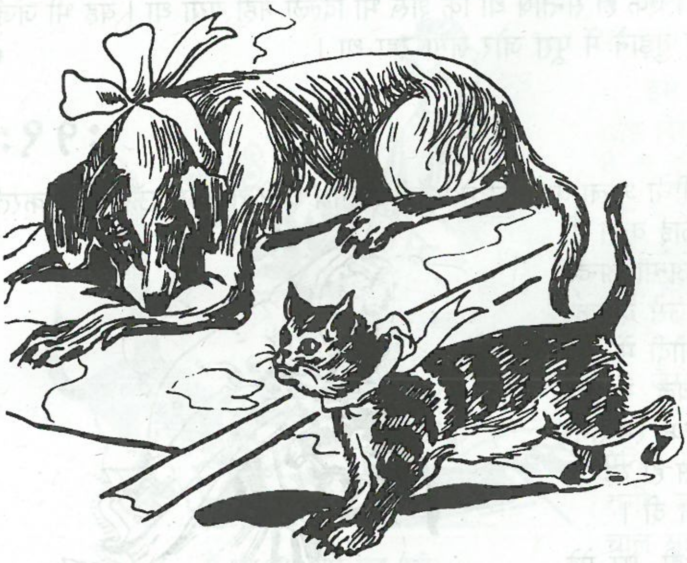
मैं बूढ़ी अम्मा के साथ चल तो दी, पर मेरे मन में यही बात थी कि मैं बूढ़ी अम्मा के साथ तभी तक रहूँगी, जब तक मुझे दिल्ली के रास्ते का पता न चले। दिल्ली की राह मिली कि फिर मैं किसीकी रोकी न रुकूँगी। मैंने ताँगेवाले को अपनी औरत से बातें करते हुए सुना था। वह दिल्ली की कितनी ही अनोखी-अनोखी बातें सुनाया करता था। वह यह भी कहा करता था कि दिल्ली दूर ही कितनी है? जमना का पुल लाँघा कि दिल्ली! मुश्किल इतनी ही थी कि मैं न यह जानती थी कि जमना क्या है और न यह जानती थी कि पुल क्या होता है। पर इससे मैं निराश नहीं हुई। बच्चो, यह तो तुम जानते ही हो कि उन दिनों मैं घमंड के घोड़े पर सवार थी। किसीको कुछ समझती ही न थी। कोई काम ऐसा था ही नहीं, जिसे मैं न कर सकूँ।

दूसरे दिन कलेवा तो मिला, पर था ऐसा कि मन मारकर खाना पड़ा। एक-एक ग्रास पर शाला का कलेवा याद आता था। रमारानी के बिना मेरा मन रो उठा। जाड़े के दिन थे। जाड़ा लग रहा था, पर चूल्हे के पास जाने को जी नहीं हुआ। सोच में सिकुड़ी बैठी रही। मन क्रोधित हो उठा। जी में आया कि शाला ही क्यों न चला जाय। वहाँ कम-से-कम शेरू तो है। अकेले-अकेले दिन कटेगा भी कैसे ? उसके साथ कुछ तो जी बहलेगा ही।

मैं शेरू से मिलने चल दी

:२०:

मैं ताँगे की सड़क-सड़क चल पड़ी। तबेले के पीछे होकर बगीचे में पहुँची। वहाँ कोई न दिखाई दिया। तबेले में झाँका। वहाँ भी किसी का पता नहीं। इसी तबेले में तो मैं अपने मित्रों की पीठ पर बैठकर कभी-कभी अनोखा आनन्द अनुभव करती थी। ये मित्र थे तजुर्बे के घोड़े। आज इनमें से भी कोई वहाँ



धीरे-धीरे मैं उसके पास पहुँची।

न था। रमारानी का टट्टू भी आज नहीं था। बड़ा बुरा लगा। तबेले से चल दी। शाला के आँगन में पहुँची। देखती हूँ कि शेरू सोया पड़ा है। वह धूप में पड़ा था। शान के साथ चारों पाँव लम्बे किये नवाबी नींद सो रहा था। जंजीर से बँधा हुआ बेशक था, पर जंजीर भी पूरी लम्बी होकर लेटी हुई थी। शेरू साँस तो ले रहा था, जंजीर तो साँस भी नहीं ले रही थी।

शेरू को देखते ही दिल खिल उठा। धीरे-धीरे उसके पास पहुँची। अपनी पूँछ से उसकी नाक गुदगुदायी। मैं समझती हूँ, उसने मुझे मक्खी समझा। उसने आँख बंद किये-किये अपना एक कान फटफटा दिया। फिर चुप हो रहा। अब मैं उसके कलेवा-पात्र तक पहुँची। यह वही कलेवा-पात्र था, जिसे मैं दो दिन पहले सिर्फ सूँघकर और नाक-भौं चढ़ाकर चल दी थी। पेट भरी जो थी। आज थी मैं भूखी। इसलिए जीभ अपने-आप बर्तन में जा पहुँची और चप-चप करके दो-एक घूँट ले ही



जब मैं दो ग्रास खा चुकी, तब कहीं शेरू की आँख खुली

गयी । डर के मारे दम निकला जा रहा था । कहीं ऐसा न हो कि चप-चप सुनकर शेरू जाग उठे और मुझ पर झपट पड़े।

जब मैं एक-दो ग्रास खा चुकी, तब कहीं शेरू की आँख खुली । उसने आँख खोलकर मुझे देखा । वह बिलकुल नहीं बिगड़ा । चुपचाप पड़ा रहा । यहाँ तक कि पूँछ हिलाने लगा । इसका मतलब था मखमली रानी, जी भरकर खाओ । तुमसे मिलकर बड़ा आनन्द हुआ ।

अब क्या था ! मेरी हिम्मत बढ़ गयी । जी भरकर खाना खाया । होंठ साफ किये और बातचीत करने के लिए तैयार होकर शेरू के पास जा बैठी ।

शेरू और मेरी बातचीत :२१:

बच्चो, यह तो तुम जानते ही हो कि कुत्ते-बिल्ली तुम्हारी तरह नहीं बोलते । बातें करने के हमारे ढंग ही अलग हैं । हम बातें न करके भी एक-दूसरे को समझ लेते हैं । हमारा तो यही खयाल है कि हमारा ढंग सबसे अच्छा है । हम बहुत जल्दी एक-दूसरे को समझ लेते हैं । बच्चो, जब तुम पैदा होते हो, तब तुम भी तो हमारे ही ढंग से काम लेते हो । हाँ, इस ढंग में एक कमी है । हमारी बातचीत लिखी नहीं जा सकती । अगर मैं लिख सकती होती, तब भी तुम्हें उससे कुछ फायदा न होता । अब मैं ऐसा करती हूँ कि मैं तुम्हारे शब्दों में तुम्हें वह बातचीत सुनाती हूँ, जो शेरू और मेरे बीच हुई । हाँ, ये बातें हमने अपनी-अपनी बोली में की थीं ।

मखमली–'देखो, सब हमें छोड़कर चल दिये। क्या तुम्हें यह बुरा नहीं लगा ? क्या तुम उदास नहीं हो।

शेरू---(जँभाई लेते हुए) 'सच तो यह है कि बहुत बुरा लगा। बुरा क्यों न लगता ? लेकिन झम्मन साईस कभी-कभी मुझे घुमाने ले जाता है। इससे जी बहल जाता है। तुम्हारा क्या हाल है ?

मखमली मेरा बुरा हाल है। मुझसे तो अकेले रहा नहीं जाता। मुझे तो पेटभर खाने को भी नहीं मिलता।'

शेरू–'खाने तक को नहीं? तुम तो अभी तक मोटी हो। फिर भी जिस दिन तुम्हारा जी चाहे, मेरा आधा कलेवा तुम्हारे लिए हाजिर है। रोज भी ऐसा कर सकती हो।'

मखमली–'धन्यवाद ! मैं जानती हूँ, तुम यह बात जी से कह रहे हो। लेकिन जैसा खाना तुम खाते हो, वैसा खाने की मुझे आदत नहीं। मुझे तो गरम-गरम ताजी चीजें पसन्द हैं। ताजा दूध मिल जाय तो क्या कहना। चिड़ियाँ, चूहा पकड़ में आ जाय, तो और भी अच्छा ! बासी खाना मुझे नहीं सुहाता। तुम जानते ही हो कि जितनी मैं घरवालों से हिल-मिलकर रहती हूँ; तुम उतने न रहते हो, न रह पा सकते हो। तुम यह भी नहीं समझ सकते कि घर में मिल-जुलकर रहना ठीक है या बाहर पड़े रहना।'

शेरू–'अच्छा-अच्छा, मैंने तो यह समझा था कि तुम अभी-अभी खाना खाकर खुश हुई होगी। लेकिन खैर ! तुम इसे खाओ या छोड़ो, तुम जानो।'

मखमली–(थोड़ी देर चुप रहकर) 'रमारानी कब तक घर लौटकर आयेंगी?'

शेरू–'बहुत दिनों के बाद। जब जोर की गर्मी पड़ने लगेगी और मक्खियाँ मुझे बेहद सताने लगेंगी और जब मैं धूप के मारे अपने घर में लेटा रहना पसन्द करने लगूँगा। मेरी जीभ हर वक्त बाहर रहने लगेगी

और मैं हरदम हाँफने लगूँगा।'

मखमली –'बाप रे बाप, यह दिल्ली है कहाँ?

शेरू–'मुझे क्या पता? अच्छा अब मुझे नींद आ रही है। अब आप बातें न कीजिये। मुझे सोने दीजिये। चाहें तो वहाँ आप बैठ सकती हैं। लेकिन ध्यान रहे, मुझसे आप अब कोई सवाल नहीं पूछ सकतीं। क्षमा करें, मैं नींद के कारण ऐसा कह रहा हूँ।'

शेरू और मेरी योजना :२२:

अब मैं रोज शेरू के यहाँ आने-जाने लगी। हम दोनों में खूब बात चलती। दोनों ही जीवन से उदास थे। क्योंकि दोनों के ही मालिक विदेश गये हुए थे। हम दोनों ही यह सोचा करते कि कोई राह निकालनी चाहिए। पर कोई राह न सूझ पड़ती। उस दिन की खुशी का क्या कहना है, जब शेरू हिम्मत के साथ बोल पड़ा–'मखमली बहन, मैं चाहूँ तो दिल्ली का पता लगा सकता हूँ। कोशिश करूँ तो दिल्ली पहुँच सकता हूँ।' यह सुनकर मैं पागल हो उठी। मैं उसके पास पहुँची और उसके झबरे बालों से पीठ मलने लगी और जोर-जोर से फुर-फुर करने लगी।

शेरू आगे बोला–'मखमली, एक बड़ी मुश्किल है। मैं हरदम जंजीर से बँधा रहता हूँ।'



मैं फाटक पर पहुँची, वह कहीं दिखाई नहीं दिया।

सचमुच यह बड़ी कठिनाई थी। फिर भी मेरा मन यह कहता था कि शेरू इतना मजबूत है कि वह

जंजीर तुड़ाकर भाग सकता है। इसलिए मैं उससे बोली–'तुम तो जंजीर तुड़ाकर भाग सकते हो, फिर क्यों नहीं राह खोज निकालते?'

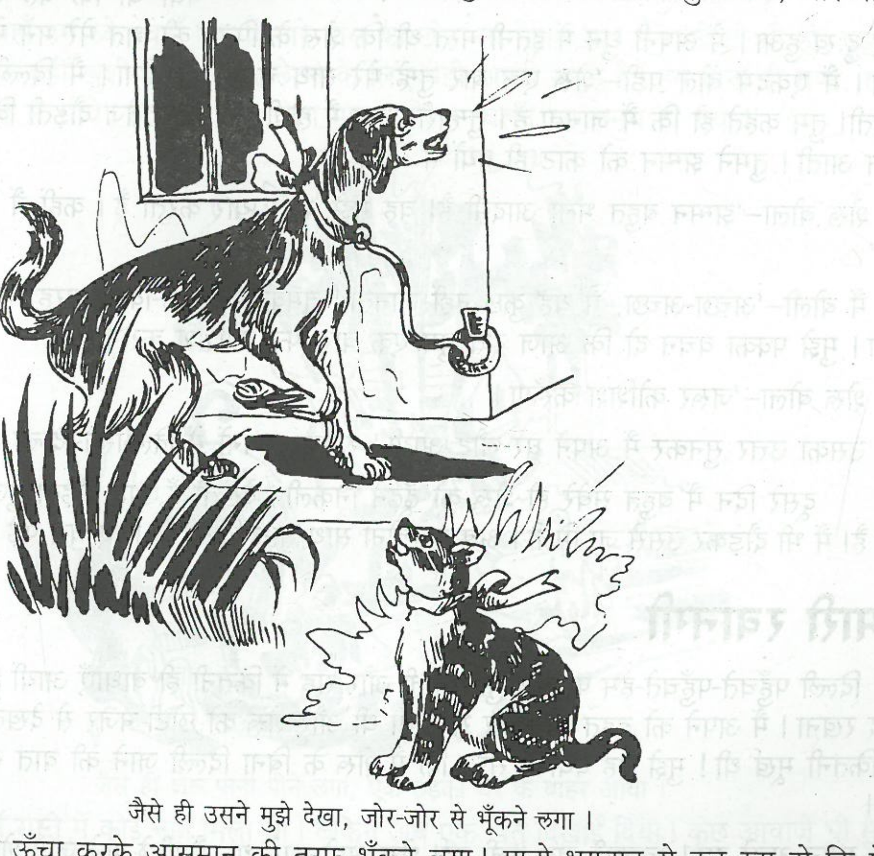
उसने उत्तर में सिर हिलाते हुए कहा–'ना, ना, यह मैं नहीं कर सकता। हाँ, एक काम कर सकता हूँ। जब मैं घूमकर आऊँगा, तो मैं कहीं छिप जाऊँगा। झम्मन साईस मुझे नहीं खोज पायेगा। फिर मैं तुम्हारे पास आऊँगा और तुम्हें साथ लेकर हम दोनों दिल्ली चल पड़ेंगे।' हम दोनों में इसी विषय पर थोड़ी देर और चर्चा चली। बात पक्की हो गयी। मैं पूरे विश्वास के साथ घर लौट गयी।

रातभर मुझे दिल्ली के सपने आते रहे। मैं बड़े सबेरे उठी और शेरू की राह ताकने लगी। छह बजे, सात बजे, साढ़े सात बजे, शेरू का कोई पता नहीं। मैं फाटक पर पहुँची। वह कहीं दिखाई नहीं दिया। वह निरा कुत्ता है। सयाना बनता है। मालूम होता है सारी योजना असफल हो गयी। उसे अपनी बात याद ही न रही होगी। चलूँ और उससे मिलकर जानूँ कि मामला क्या है?

कहने से करना भला

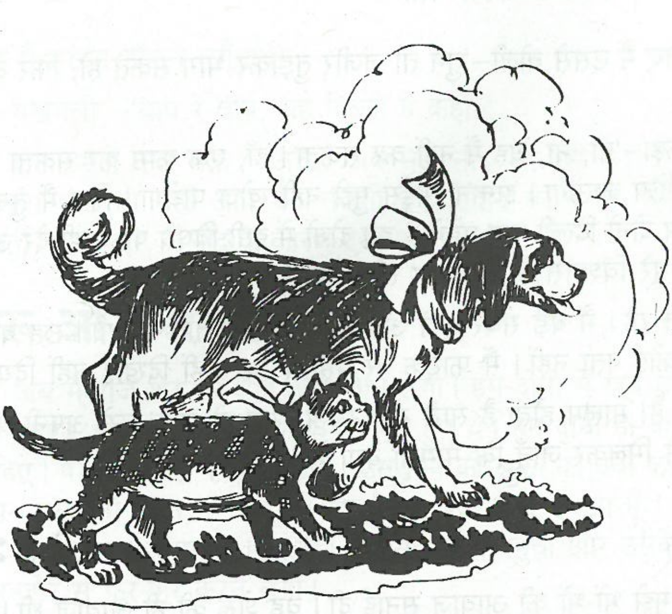
:२३:

जब मैं तबेले के पास पहुँची, तो मुझे भों-भों की आवाज सुनाई दी। वह शेरू की ही आवाज थी। मैं समझ गयी कि मामला क्या है। मैं दौड़ी-दौड़ी उसके पास पहुँची। जैसे ही उसने मुझे देखा, जोर-जोर से



जैसे ही उसने मुझे देखा, जोर-जोर से भूँकने लगा।

भूँकने लगा। सिर ऊँचा करके आसमान की तरफ भूँकने लगा। मानो भगवान् से कह रहा हो कि मेरी



हम दोनों साथ-साथ दिल्ली के लिए चल पड़े।

सहायता करो, मेरी सहायता करो। उसने इतना शोर मचाया कि मैं उसके पास जाने की हिम्मत न कर सकी। दूर खड़ी रही। जानना चाहती थी कि आखिर इसको हो क्या गया है। मैंने इशारे से यह सब बात शेरू को समझा दी। तब उसने अपनी सारी बात बता दी। वह बोला–'मैं झम्मन साईस के साथ घूमने गया था। जैसे ही घूमकर लौटा, छिपनें के लिए भाग गया। झम्मन ने मुझे देख लिया। वह मेरे पीछे झपटा। मुझे पकड़ लिया। मुझे खूब पीटा और फिर मुझको जंजीर से बाँध दिया।'

दिल्ली मेरे सिर पर इतनी समा गयी थी कि यह सब सुनकर मुझे बेहद दुःख हुआ। मैं अपनी धुन में इतनी मस्त थी कि शेरू के पिटने की बात मेरे मन में जगह ही न पा सकी। मैं एकदम बोल पड़ी–'शेरू एक बार तुम्हें मेरे साथ चलना ही होगा। मैं दिल्ली का रास्ता नहीं जानती। तुम कहते हो कि मैं जानता हूँ। तुम्हारी जगह मैं होती, तो इतनी तेज दौड़ती कि झम्मन के हाथ ही न आती। तुमने झम्मन को काट ही क्यों न लिया ?'

शेरू बोला–'झम्मन बहुत भला आदमी है। वह मुझे बहुत प्यार करता है। कहीं मैं उसे काट सकता हूँ?'

मैं बोली–'अच्छा-अच्छा, मैं यह कुछ नहीं जानती। तुमको किसी-न-किसी तरह मेरे साथ चलना ही होगा। मुझे पक्का वचन दो कि आज रात तुम एक बार फिर कोशिश करोगे।'

शेरू बोला–'जरूर कोशिश करूँगा।'

उसका उत्तर सुनकर मैं अपने घर लौट आयी। रातभर सपनों में दिल्ली-ही-दिल्ली आती रही।

दूसरे दिन मैं बहुत सबेरे ही शेरू को ढूँढ़ने निकली। देखती हूँ, वह दौड़ता हुआ मेरी तरफ आ रहा है। मैं भी दौड़कर उससे जा मिली। अब हम दोनों साथ-साथ दिल्ली के लिए चल पड़े। ●

हमारी रवानगी :२४:

दिल्ली पहुँचते-पहुँचते-हम पर क्या-कुछ बीती और राह में कितनी ही बाधाएँ आयीं। बच्चो, एक बात याद रखना। मैं अपने को बहुत होशियार समझती थी और शेरू को छोटी नजर से देखती थी। हाय-हाय, मैं कितनी मूर्ख थी! मुझे यह क्यों न सूझा कि मैं शेरू के बिना दिल्ली जाने की बात सोच ही न सकती थी।

सगुन अच्छे हुए। रवानगी खूब भली हुई। शेरू आगे-आगे था, मैं पीछे-पीछे जहाँ शेरू आगे मुड़ता, मैं

भी उधर को ही मुड़ती। दो-तीन घंटे हम दोनों चुप-चाप चलते रहे। इतने में मेरी तरफ शेरू ने देखा। बोला–'मखमली, थक तो नहीं गयी। आराम करने की जगह आ गयी है।'



हम दोनों ही घण्टे सवा-घण्टे वहाँ आराम से सोये।

सड़क पर जहाँ हम रुके, वहाँ एक किनारे घास का छोटा-सा मैदान था। मैं थकी तो थी ही। मुझे उस मैदान को देखकर बड़ी खुशी हुई। सोचा, लेटने के लिए बड़ी अच्छी जगह है। हम दोनों ही घण्टे, सवा-घण्टे वहाँ आराम से सोये। इतने में शेरू जाग पड़ा। बोला–'चलने का समय हो गया।'



जैसे ही शेरू पानी पीने लगा, एक लड़का घर के बाहर आया।

अब तक हमें रास्ते में कोई नहीं मिला था। लेकिन अब एक खेत दिखाई दिया। कुछ आवाजें भी सुनाई

दीं। वहीं एक घर था। उस घर के पास एक पोखर थी। उस पोखर में कुछ बत्तक तैर रहे थे। शेरू पानी पीने गया। मैं सड़क पर ही बैठी रही।

जैसे ही शेरू पानी पीने लगा, वैसे ही एक लड़का घर के बाहर आया। उसके हाथ में बत्तक के लिए कुछ दाने थे। जैसे ही उसने शेरू को देखा, उसने एक कंकर उठाया और शेरू को दे मारा, शेरू ने इसकी जरा भी परवाह न की। पत्थर शेरू को लगा ही न था। वह प्यासा था। फिर पानी पीने लगा।

तुम जानते हो कि मैं बच्चों से बहुत सतर्क रहती हूँ। उनसे डरती भी हूँ। मैं छिपने को सोचने लगी। सोचूँ-सोचूँ कि उस लड़के ने मुझे देख लिया। वह मुझे पकड़ने दौड़ पड़ा। मैंने म्याऊँ-म्याऊँ करके शेरू को पुकारा। उस तक मेरी आवाज न पहुँच पायी, मैं पकड़ी गयी। और मैं फिर एक लड़के के क्रूर हाथों से पकड़ी हुई एक बार फिर कराहने लगी।

मैं बाँधकर पोखर में फेंक दी गयी :२५:

मैंने सुना, लड़के ने कहा– 'आओ, चलो आज तुम्हें प्रातःकाल स्नान कराऊँगा।'

मैंने ये शब्द क्या सुने, मुझे तो काठ मार गया। पोखर के ठण्डे पानी में गोता! सारे बाल पानी से तर। कान-नाक में पानी। हाय, हाय अब यह क्या होने को है? क्या अब मुझे कोई भी नहीं बचायेगा? शेरू का कहीं पता न पाया।



मुझे पत्थर से बाँधकर पोखरे में फेंक दिया।

इस निर्दयी बालक की न पूछो। पूरा चाण्डाल था चाण्डाल। उसे देखते ही डर लगता था। वह कहीं से एक पत्थर ढूँढ़ लाया। और ढूँढ़ लाया एक रस्सी का टुकड़ा। मुझे उस पत्थर से बाँध दिया। अभागे ने इतना कसकर बाँधा कि मेरी हड्डियाँ दुखने लगीं। बस इतनी ही मुझे खुशी है कि मैंने भी उसे इतनी जोर



दो-चार हाथ पानी के ऊपर मारे।

से खरोंचा कि उसके हाथ से खून बहने लगा। मुझे पत्थर से बाँधकर उसने दोनों हाथों से उठाया, हाथ ऊँचे किये और पोखरे में फेंक दिया।

मैं छप से पोखर में गिरी। मैंने जान लड़ाकर अपनी गर्दन पानी के ऊपर रखनी चाही और तैरते रहने के लिए दो-चार हाथ पानी के ऊपर मारे। उम्रभर में मुझ पर इस तरह की आफत कभी न आयी थी। यह पहली ही आफत थी और पहली ही कोशिश। यह सब कुछ मुझे अपने-आप ही सूझ गया। मैंने अपनी चारों टाँगों से जी भरकर कोशिश की। थोड़ी ही देर में मुझे मालूम हो गया कि मेरे पाँव मेरी मदद नहीं कर सकते। क्योंकि मेरी पीठ से एक पत्थर बँधा हुआ था। मैं जैसे-जैसे टाँगें मारती, वैसे-वैसे डोरी मेरे पाँव



शेरू अपनी गरम जीभ से चाट रहा है।

में आ उलझती। पत्थर मुझे नीचे ले जाने लगता। जाड़े की ऋतु, ठण्डा पानी, मैं काँपने लगी। मेरा दम फूल गया। मैं पोखर की तह में पहुँच गयी।

मेरी सारी शक्ति बिदा लेकर चल दी थी, जब मैंने अपने पास ही छप की अवाज सुनी। इस आवाज के तुरत बाद ही मेरी देह किसी की पकड़ में थी। मैं बेहोश हो गयी। जब होश आया तो मैंने अपने- आपको सूखी जगह पड़ा पाया। ज्यों-त्योंकर जब मैंने अपनी आँखें खोलीं, तो देखा कि शेरू मेरे पास खड़ा है और अपनी गरम-गरम जीभ से मुझे चाट रहा है।

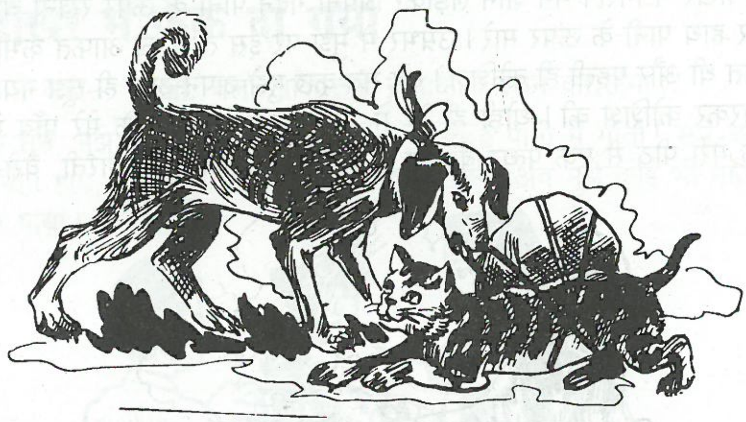
शेरू ने मेरी जान बचायी

मुझे हिलते-डुलते देखकर शेरू पूँछ हिलाते हुए बोल पड़ा–'अब तो तुम ठीक मालूम होती हो?

मैं बोली–'हाँ' मैं उठने लगी, पर मुझसे उठा नहीं गया।

शेरू बोला–'ना, ना, मखमली जीजी ऐसा न करो। मुझे सुखा लेने दो और तुम्हें जरा गरम कर लेने दो। तुम ठीक हो गयी हो, पर इतनी ठीक नहीं हो, जितनी तुम अपने को समझती हो।'

मैं बहुत धीमी आवाज में बोली–'मेरी जान किसने बचायी? शेरू ने मेरी बात सुनकर जल्दी-जल्दी अपनी पूँछ हिलाना शुरू किया; मानो वह कह रहा था कि मैंने बचायी और मुझे बड़ा आनन्द आ रहा है। शेरू आगे बोला–'जब मैंने जीभर पानी पी लिया, तो मैं तुम्हारे पास आने के लिए लौटा। इधर-उधर सब



शेरू ने दाँतों से डोरी पकड़कर उसके दो टुकड़े कर दिये।

तरफ देखा। तुम्हारा कहीं पता नहीं। थोड़ा सड़क पर दौड़ा, पर तुम दिखायी न दी। इतने में मुझे उस लड़के की याद आ गयी, जिसने मुझे कंकर मारा था। मैं उसके पीछे भाग खड़ा हुआ। जैसे ही उसने तुम्हें तालाब में फेंका, वैसे ही मैं तालब पर पहुँच गया और मैंने यह सब देख लिया।'

मैं बोल पड़ी–'पहले यही पत्थर उसने मेरी पीठ में बाँधा था। इससे मुझे इतनी तकलीफ होती है कि मैं साँस नहीं ले सकती।'

शेरू बोला–'मेरी प्यारी जीजी! मैंने यह सब कुछ नहीं देखा। यह अच्छा ही हुआ कि तुम डूबकर मरते-मरते बच गयी। क्या अब तुममें इतना बल है कि तुम इस डोरी को काट सको।'

मैंने जोर लगाया। पर सफल न हो सकी। मैं कराहकर बोली–'यह डोरी मुझसे नहीं टूटेगी। मालूम होता है, अब मैं नहीं बच सकूँगी।'

शेरू बोला–'मन कच्चा न करो। ऐसी बात सोचो भी नहीं। जोर लगाकर देखता हूँ। मेरे जोर लगाने पर अगर तुम्हें थोड़ी चोट आ जाय, तो बुरा न मानना।'

बस, मैं चुपचाप पड़ गयी। शेरू ने अपने दाँतों से मेरी डोरी पकड़ ली। एक झटके में उसके दो टुकड़े कर दिये। डोरी के टूटते ही मुझमें दम आ गया। शेरू से बोली–'मुझे भूख लगी है। मुझे कुछ खाने को

मिल जाय, तो मैं अभी ठीक हो जाऊँगी।'

मैं दिल खोलकर रखे देती हूँ :२७:

मुझे भूख लगी है, यह सुनकर शेरू खेत के पासवाले मकान की तरफ दौड़ा। द्वार पर पहुँचकर उसने धीरे-धीरे भूँकना शुरू किया। पहले तो कोई बाहर नहीं आया। लेकिन जब शेरू ने अपनी पिछली टाँगों पर खड़े होकर अगली टाँगों से द्वार खटखटाया, तब एक महिला बाहर आयी। शेरू उसे देखकर हल्की आवाज में घुरघुराया और जल्दी-जल्दी पूँछ हिलाने लगा। वहाँ से दौड़कर मेरे पास आया। भली महिला सारा मामला समझ गयी। वह भी उसके पीछे-पीछे मेरे पास तक पहुँच गयी।



शेरू अपनी पिछली टाँगों पर खड़ा हो द्वार खटखटाने लगा।

उस महिला ने अपना हाथ उठाया और मुझे देखकर बोली–''यह सब काम उस जुल्मी जीवन का है। वह बड़ा नटखट लड़का है। मैंने सुना था वह कह रहा था, अगर मेरा नाम जीवनसहाय है, तो मैं उस बिल्ली को खतम करके रहूँगा। बड़ा बुरा लड़का है। एकदम निर्दयी!'

यह कहकर वह घर वापस चली और जल्दी ही कटोरीभर गरम दूध लेकर लौटी। बोली–'अरी बिचारी पूसी, ले यह पी। तू अभी ठीक हो जायगी।'

मैंने दूध पी लिया। मुझमें जान आ गयी। मुझमें इतना बल आ गया कि मैं अपनी टाँगों पर खड़ी हो गयी। जब तक मैं दूध पीती रही, तब तक वह भली महिला वहीं मेरे पास खड़ी रही। शेरू तो पास था ही। फिर वह शेरू से बोली– 'तुम बहुत भले कुत्ते हो। तुम्हें भी तो कुछ मिलना चाहिए।' और फिर एक रकाबीभर मांस उसके लिए लायी।

जब हम दोनों पेटभर खा चुके, शेरू ने अपनी पूँछ हिलायी। मैंने फुर-फुर करके महिला को धन्यवाद दिया। हम दोनों फिर दिल्ली के लिए चल पड़े। चलते-चलते मैंने शेरू से पूछा–'तुमने मुझे पानी में से किस तरह निकाला?'

शेरू बोला–'मैं तैरकर पोखर में चला गया और तुम्हें डूबते-डूबते बचा लिया। लड़के ने मुझे बहुत



पुसी, ले यह तू पी अभी ठीक हो जायगी।

रोका, पर मैं रुका नहीं। मैंने उसकी टाँग में काट खाया। वह घबराकर भाग गया।'

मैं बोली–'मैं नहीं जानती, ये लड़के पैदा ही क्यों हुए? मैं अब अगर किसी लड़के को देखूँ तो मेरा दम सूख जाय।'

शेरू बोला–'सभी लड़के खराब नहीं होते।'

मैं बोली–'हाँ तुम्हारे लिए। वे मुझे तो जरा चैन नहीं लेने देते। मैं तो यही चाहती हूँ कि दुनिया में बच्चे हुआ ही न करें।'

शेरू मुझे जमना पार करता है :२८:

शेरू सड़क छोड़कर दूसरी राह चल पड़ा। मैं पीछे-पीछे थी ही। टेढ़े-मेढ़े रास्ते से हम दोनों एक जगह पहुँचे। वह जगह अनोखी थी। आगे कोई रास्ता ही न था। आगे था गहरा गड्ढा। उसमें खूब पानी था। शेरू ने थोड़ी देर इधर-उधर नजर डाली। फिर दायीं तरफ चल दिया। थोड़ी ही देर में हम दोनों नदी के किनारे पहुँच गये। यह थी जमना नदी।

शेरू बोला–'इस नदी के पार जाना होगा। तब दिल्ली देखने को मिल सकेगी।' मैं तो यह बात सुनकर काँप गयी।

मैं बोली–'ना बाबा, मैं तो पानी में पाँव भी न रखूँगी। मैंने दिल्ली छोड़ी। मुझे तो पानी की सूरत से डर लगता है। मैं पोखर में गोता खाकर पानी को अच्छी तरह समझ गयी हूँ। शेरू, अब तुम ऐसा करो, कोई दूसरी राह निकालो, जिस रास्ते पानी में न जाना पड़े।'

शेरू बोला–'दिल्ली पहुँचना है, तो नदी पार करनी ही होगी।'

मैं बोली–'यही बात है, तो जाने दो। मैं शहादरे लौट जाती हूँ। वहीं शाला में पड़ी रहूँगी।' हम दोनों

का यह हाल था कि मैं पूरब तो वह पश्चिम। थोड़ी देर हम दोनों '३६' बने बैठे रहे।

शेरू बोला–'अच्छा ऐसा करो, तुम मेरी पीठ पर बैठ जाओ। तुम्हारे पाँव तक नहीं भीगेंगे। तुम पार हो जाओगी।

'पीठ पर बैठ जाऊँ–खूब कही तुमने। मानो मुझे अपने पर भरोसा है। जरा पाँव फिसला, तो जमना में। मैं तुम्हारी बातों में आनेवाली नहीं। तुम हिले बिना न रहो, तो मैं फिसले बिना न रहूँगी।' मखमली बोली।

जीजी मखमली! तुम क्या बात करती हो? देखो, मेरी पीठ कितनी चौड़ी है और मेरे बाल कितने झबरे हैं। इनको पकड़ लेने के बाद पाँव फिसलने का डर कैसा?'' शेरू बोला।

'माना, तुम्हारे बाल बहुत झबरे हैं और मेरे बालों जैसी मुलायम भी नहीं है। माना कि वे मेरे पंजों में अच्छी तरह फँस जायँगे। पर इस बात की क्या गवाही कि पानी तुम्हारी पीठ पर नहीं आयेगा। मखमली बोली।

शेरू बोला–'मैं' तो यही समझती हूँ कि पानी मेरी पीठ के ऊपर पर नहीं आयेगा। लेकिन अगर आ ही जाय, तो तुम मेरी गर्दन पकड़ सकती हो। कम-से-कम गर्दन तो पानी के नीचे नहीं जायगी।'



ना बाबा मैं तो पानी में पाँव भी न रखूँगी।

समझा-बुझाकर, धमका-पुचकारकर शेरू ने मुझे राजी कर ही लिया और मैं डरती-डरती उसकी पीठ पर सवार हो गयी। वह बड़ी होशियारी से पानी में घुसा। पहले-पहल तो मैंने बिलकुल परवाह न की।

जैसे-जैसे पानी गहरा होता गया और किनारा दूर होता गया, वैसे-वैसे पीठ के पास पानी आता गया। जैसे ही शेरू के पाँवों ने धरती छोड़ी और वह तैरने लगा, वैसे ही मैं घबरा उठी। मेरा डर बढ़ने लगा। पीठ डग-मग हिलने लगी। मेरा यह हाल कि अब गिरी, अब गिरी। शेरू की पूँछ का कोई पता ही न था। पीठ भी पानी के नीचे थी। मेरे पंजे बेशक शेरू की गर्दन को पकड़े हुए थे। वे सूखे थे और सुरक्षित थे। कभी-कभी मुझे पानी के छींटे लग जाते थे। खैर, ज्यों-त्योंकर हम किनारे लगे। मैं तो एकदम किनारे पर

कूद गयी। चढ़ने में जितनी देर लगी थी, उतरने में उसका सौवाँ समय भी नहीं लगा।

शेरू ने किनारे पर आकर जोर की फुरैरी ली। बालों का सारा पानी झाड़ दिया। थोड़ी देर धूप ली। आगे चल पड़ा! मैं साथ-साथ हो ली। कहीं-कहीं खूब रेता था। हम दोनों उसका आनन्द लेते हुए और उसे पिछले पैरों से बिखेरते हुए बढ़े जा रहे थे कि फिर पानी की धार दिखाई दी। यह जमना की दूसरी धार थी।



मैं डरती-डरती उसकी पीठ पर सवार हो गयी।

मेरा दम फिर सूख गया। पर अब की बार मैं कुछ नहीं बोली। उसी तरह पीठ पर सवार हो गयी।



खैर, ज्यों-त्यों कर हम किनारे लगे।

मुझे मालूम हुआ कि यह दिल्लीवाला किनारा है। मैं खुशी से फूल उठी। जल्दी-जल्दी चाटकर मैंने अपने पाँव सुखा डाले। मुझे इतना तक न सूझा कि शेरू को धन्यवाद दूँ।

प्यारे बच्चो, तुम ऐसी भूल कभी न करना। मैं इसे जंगलीपन समझती हूँ। किसी का एहसान भूल जाना स्वार्थीपन की हद है। ऐसे स्वार्थी पत्थर-हृदय समझे जाते हैं।

लड़ाई :२९:

किनारे से कुछ ही दूर पूरब की तरफ चलकर मुर्दाघाट दिखाई दिया। वहाँ कई कुत्ते एक मुर्दे से चिपटे हुए थे। यह देखकर मेरी जान निकल गयी। अब शेरू से चिपक गयी। तुम जानते ही हो कि मैं कुत्तों से बहुत डरती हूँ। शेरू समझ गया। वह रास्ता काटकर इधर-उधर घूमता हुआ मुझे निगमबोध ले पहुँचा। यह जमना का एक घाट है।

निगमबोध से निकलकर हम सड़क पर कुछ ही दूर चले होंगे कि हमें लड़कों की एक टोली दिखाई दी। उन्हें देख मैं घबरा उठी। मैं लड़कों से भी बहुत डरती थी। शेरू ने उनसे भी रास्ता काट। धीरे-धीरे हम दिल्ली शहर की दीवार के पास पहुँच गये। मैं तो यही समझी कि घर आ गया। अब जल्दी ही मैं रमारानी की गोद में होऊँगी। वे मुझे प्यार कर रही होंगी। पर मेरा सोचा हुआ एकदम गलत निकला।



दोनों में खूब लड़ाई हुई।

दीवार लाँघकर हम दोनों आगे बढ़े। रास्ते में एक कसाई की दूकान पड़ी। हम वहाँ जरा ठिठके। शेरू ने उधर ताका भी। मुझे छिछड़ों की याद आयी, उसे बोटी की। पर हम रुके नहीं। रुकते तो बुरा न होता? दोनों भूखे थे।

दूकान से दो-चार कदम ही चले होंगे कि दूकान पर से एक बड़ा भयानक कुत्ता हमारी ओर झपटा। वह जरूर दूकान का चौकीदार रहा होगा। पर उसको हमें चोर समझने का कोई अधिकार नहीं था। हमने कोई ऐसा काम ही नहीं किया था।

उसने एकदम शेरू की गर्दन पकड़ ली। काट भी लिया। मैंने जीभर उस कुत्ते की ओर थुरथुराया। पर उसने उस ओर ध्यान ही नहीं दिया। शेरू को छोड़ा ही नहीं। दोनों में खूब लड़ाई हुई। शेरू अपनी रक्षा न कर सका या शायद वैसा उसने चाहा ही नहीं, क्योंकि वह बहुत भला और दयालु कुत्ता था। दोनों भूक रहे थे। लोग जमा हो गये। कुछ दोनों को लड़ाई के लिए उकसाने लगे। आदमियों में यह बहुत बुरी बात है।

मुझसे न रहा गया। मैं शेरू की मदद के लिए दौड़ी। मैंने चाहा कि मैं उसकी आँख पर एक खरोंच मारूँ, लेकिन कसाई कुत्ते ने उल्टा मेरा बाँया कान कुतर लिया। यह देख उसके मालिक को गुस्सा आ गया। वह एक बेंत लेकर दौड़ा। शेरू को अपने कुत्ते से छुड़ा लिया। शेरू खून से लथपथ हो रहा था। कसाई अपने कुत्ते से कह रहा था–जाने दे इन कुत्ते-बिल्लियों को। इन्होंने तेरा क्या बिगाड़ा है? ये अपने शहर में बाहर से आये हैं। कितने बहादुर हैं। बाहर से आनेवालों के साथ इस तरह का बर्ताव नहीं करना चाहिए।' हम दोनों तो उस कुत्ते से पीछा छुड़ाकर खूब जोर से भागे। फिर भी एक आदमी ने एक पत्थर हम पर खींचकर मारा। वह मेरी टाँग में आकर जोर से लगा। इससे मैं महीनों लँगड़ाती रही।

बिचारे शेरू का बुरा हाल था। पास ही एक खंडहर मिल गया। उसमें भूसा पड़ा हुआ था। मैं उसमें जा घुसी। मेरे हाथ एक चुहिया पड़ गयी। मेरा तो काम चल गया, पर शेरू को कुछ न मिला। हमने रात उसी खंडहर में काटी। दूसरे दिन शेरू में कुछ दम आ गया। उसे भूख लग आयी। बोला–'मुझे नाश्ता करने के लिए कुछ करना ही होगा। वह चल दिया। मुझसे कह गया कि जब तक न आऊँ, तुम यहीं रहना।

मैं चुपचाप पड़ी रही। कुछ देर अपनी टाँग चाटी और फिर सो गयी। किसी आवाज ने मुझे जगा दिया। यह किसी आदमी की आवाज थी। वह वहाँ भूसा लेने आया था। वह कह रहा था आज दिन अच्छा है। आज इसे बरसा लिया जाय। जिसे मैं भूसा समझे हुए थी, वह असल में दाँया हुआ गेहूँ था। वह मेरे पास से कई टोकरी उठाकर ले गया। मैंने सोचा, अब मुझे यहाँ से चल देना चाहिए। मैं शेरू को ढूँढ़ने निकली। मुझे वह न दिखाई दिया। मैं समझती थी कि वह दूर नहीं गया होगा। इसलिए मैं उसकी राह ताकने लगी।

●

मैं शेरू को खो बैठी :३०:

मैं तो यात्रा से तंग आ गयी थी। खण्डहर की दीवार पर बैठी-बैठी सोच रही थी कि अगर मुझे मालूम होता कि दिल्ली की यही यात्रा और दिल्लीवाले ऐसे ही होते हैं, तो मैं दिल्ली की तरफ मुँह भी न करती। पर दिल्ली पहुँचकर दिल्ली से लौट चलना बहुत बुरी बात है। इतने में आसमान पर बादल छा गये। खूब अँधेरा हो गया। मेरी नाक पर एक-दो बूँदें भी गिरीं। मैं समझी, अब मेह बरसेगा। आफत पर आफत। ऐसे में तो मैं वहीं अच्छी थी। दिल्ली तो शहादरे से गयी-बीती है।

थोड़ी देर में तोप की-सी आवाजें आने लगीं। पर यह थी बादल की गरज। एक जोर का प्रकाश हुआ। मेरी आँखें चौंधिया गयीं। यह थी बिजली की चमक। मेह बरसने लगा। मैं भींग गयी। शेरू का कोई पता नहीं। मैं न समझ पायी कि शेरू को हुआ क्या? थोड़ी देरी और सब्र किया और फिर उसे ढूँढ़ने निकल पड़ी।

मैं हैरान थी। दिल्ली की गलियों में रास्ता ढूँढ़ निकालना मेरे बस का न था। शेरू छूटा, तो फिर मैं

कहाँ? दुःख से मैं रोने लगी। भींगी आँखों सड़क पर चल दी। एकदम एक खटका-सा हुआ। मैंने जानना



मैं भींग गयी।

चाहा कि किधर से यह आवाज आयी। पर कुछ दिखाई न दिया। खटका फिर हुआ। ऐसा लगा, मानो मेरे पैर के नीचे से ही हो रहा हो।

मैं रुक गयी। कुछ कराहने और भूँकने की आवाज सुन पड़ी। मेरे मन ने कहा, यह तो शेरू की आवाज है। वह जरूर किसी आफत में फँस गया है। पर वह है कहाँ? यह आवाज आ कहाँ से रही है? मैं कभी आगे गयी, कभी पीछे, कभी दायें, कभी बायें। पर सब बेसूद। इतने में एक खाईं दिखाई दी। वह बड़ी गहरी थी। उसके पास पहुँचने से आवाज जोर की हो गयी थी। मैं खाईं में कूद गयी। वहाँ एक छोटा-सा भिट मिला। मुझे विश्वास हो गया कि शेरू इसी भिट में है। क्योंकि भिट के बाहर उसके पंजे के निशान बने हुए थे। मेरी समझ में न आता था कि मैं उसकी कैसे मदद करूँ। मैं सिर्फ इतनां कर सकती थी कि भिट पर बैठी-बैठी 'म्याऊँ-म्याऊँ करती रहूँ। इस म्याऊँ-म्याऊँ से कुछ होना-जाना नहीं। पर करूँ तो क्या करूँ?

शेरू मिल गया :३१:

धीरे-धीरे आवाज बन्द हो गयी। मैं खाईं से बाहर आ गयी। किनारे पर बैठ गयी। आवाज फिर सुनाई पड़ी। मैं रुकी। आवाज बन्द हुई। कम हुई। फिर हुई, फिर रुकी। मैं किनारे-किनारे ऊपर को चली। एक फाटक आया। उस पर मैं चढ़ गयी। आगे चली। एक पुल आया, जो सड़क के ऊपर होकर गया था।

पुल पर पहुँचकर आवाज जोर की सुनायी देने लगी। वहीं पास एक भिट था। लेकिन इस भिट का मुँह मिट्टी से बन्द था। मेरा मन बोल उठा कि शेरू यहीं है। मैं वहीं उसीके पास बैठ गयी। मुझे आशा होने लगी कि शेरू अपने पंजों से मिट्टी हटाकर जरूर बाहर निकल आयेगा। इसमें बहुत देर लग गयी।

आखिर वह निकल ही आया। सिर से पैर तक धूल-धूल हो रहा था। आँखों तक में धूल थी। वह देख तक नहीं सकता था। बहुत थका हुआ था। हाँफता-हाँफता घास पर पड़ा। मैं उसके पास बैठ गयी और उसे दिलासा देने की कोशिश करने लगी। जब उसमें बोलने लायक दम आया, तो बोला—'मैं भिट समझकर

उसमें घुसा था। चूहे को पकड़ने घुसा था। वह निकली नाली। अन्दर अँधेरा ही अँधेरा था। कुछ दिखाई ही न दिया। मैं रास्ता भूल गया। कहीं दो घंटों में मैं यहाँ तक पहुँच पाया हूँ।' बिचारा शेरू कलेवा ढूँढ़ने क्या निकला, आफत में फँस गया।

शेरू भींगा हुआ था। जब हम चले, तो दोनों लथपथ थे। दोनों का बुरा हाल था। शेरू कीचड़-कीचड़ हो रहा था। दुबला था, थका हुआ था, चलना मुश्किल हो रहा था। आँखों में धूल भरी होने से उसे कुछ दिखाई भी नहीं दे रहा था। मेरा भी बुरा हाल था। मेरे बाल भींगे हुए थे। मेरी पूँछ लटक रही थी। पीछे-पीछे घिसट रही थी। मैं लगड़ी थी ही और कान कट जाने से मेरी सुन्दरता सदा के लिए मुझे छोड़कर चल दी थी।

दिल्ली की गलियाँ पार कर ही लीं :३२:

हम कुछ ही गज चले होंगे कि हमने कुछ आदमियों को टोकरियाँ बनाते हुए देखा। पास ही उनकी औरतें खाना पका रही थीं। खाने के बरतन में से गंध निकल-निकलकर हमारी नाकों तक पहुँच रही थी।

शेरू के कान खड़े हो गये। उसने उन बर्तनों की तरफ ललचायी निगाह फेंकी। मेरी भी लार टपक पड़ी। हम उसी तरफ बढ़े। टोकरी बनानेवाले ने हम पर करुणा की नजर डाली। हमारी हिम्मत बढ़ गयी। उसकी औरत ने भी हमें देखा। वह अपने दो छोटे बच्चों को कुछ खिला रही थी। यह देख शेरू वहीं बैठ गया। मैं भी म्याऊँ-म्याऊँ करके अपनी भूख जताने लगी।

यह देख एक औरत बोल पड़ी–'इन बिचारों का बुरा हाल है, इनका पेट पीठ से लग रहा है। न जाने कितने दिन के भूखे हैं। देखो न, कुत्ता तो एकदम कीचड़ से लथपथ है, मानो गन्दी नाली में गिर गया हो।


वह अपने बच्चों को कुछ खिला रही थी।

यह कहते-कहते उसने एक टुकड़ा शेरू की ओर फेंका। उसने उसे मुँह में ही लपक लिया। चट पूँछ हिला दी। मैं ताकती ही रह गयी। मुझे कुछ न मिला। किसीने भी मेरी परवाह न की। हम दोनों चल दिये जब उनकी निगाह से परे हुए, तो शेरू बैठकर अपनी हड्डी चचोड़ने लगा। मैं अपने लिए इधर-उधर कुछ ढूँढ़ने लगी। अपने-आप कुछ न करती, तो भूखों मरती। शेरू का मुँह ताकने से मैंने कुछ करना ही अच्छा समझा।

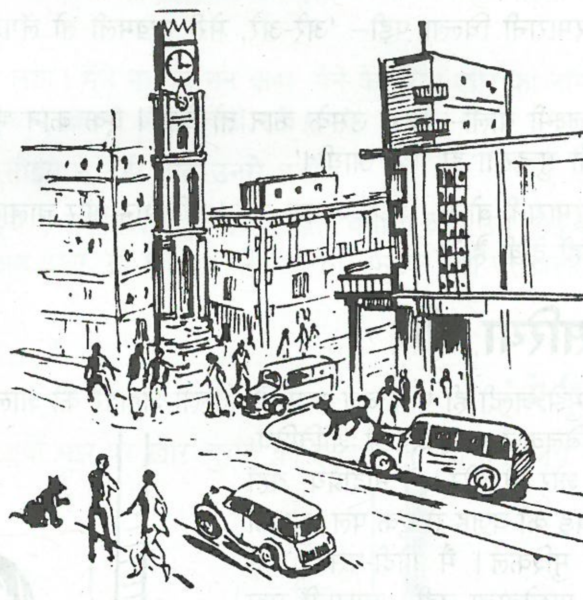
दिल्ली के ऊँचे-ऊँचे मकान, उन पर बैठे पक्षी मेरी पहुँच से परे थे। इसीलिए मैंने नाली खोजनी शुरू की। भाग्य से एक मेढक मिल गया। मेरा काम चल गया। शेरू की हड्डी में खाने को कुछ था ही नहीं। लेकिन उसने अपनी तसल्ली मान ली। मैं भी उसकी कुछ मदद न कर सकी। हम आगे बढे।

और अब हम रेल के पुल के पास आये। उस पर आदमियों की बहुत भीड़ थी। हम पर नजर डालने

को किसीको फुरसत न थी। हम किनारे-किनारे चल रहे थे। फिर भी कोई अगर हमारे पास आ जाता, तो हमसे बचकर निकल जाता। न हमारी कुछ सूरत, न हमारी कुछ शकल। शेरू सुन्दर था, पर दुबला होने से वह भी असुन्दर लगने लगा था। तिस पर भी कीचड़ से सना हुआ। कोई देखे भी, तो क्यों देखे! शेरू मुझसे बोला–'जीजी मखमली, देख लिया, यह है दिल्ली।' मैं तो जब भी 'दिल्ली' शब्द सुनती, फड़क उठती। दिल्ली में फड़क उठने का अभी कुछ न मिला था। हाँ, रमारानी के मिलन की आशा मन में गुदगुदी ले लेती थी।

इतनी अनोखी बिल्ली :३३:

पुल पर भीड़ ही भीड़ थी। मर्द, औरत, बच्चे, टाँगे, घोड़े, साइकिल, मोटर सभी कुछ थे। मैं घबरा रही थी। पग-पग पर कुचल जाने का डर था। सड़क पार करना आफत थी। शेरू अपनी धुन मे मस्त था। वह तो दुलकी चाल से आगे ही बढ़ा जा रहा था। मुझे उसका साथ देना ही पड़ता था। हमारी किसीने रत्तीभर परवाह नहीं की। आखिर हम एक ऐसी सड़क पर आये, जिसके दोनों ओर बड़े ऊँचे मकान थे। शेरू बोला–'यही है चाँदनी चौक।' मैं कुछ न बोली, क्योंकि मैं कुछ न समझी। हम एक गली में मुड़े। वह गली सड़क से कम चौड़ी थी। भीड़ उसमें खूब थी। कहीं-कहीं दूकानें थीं। गली खतम होते ही एक बहुत बड़ा मकान दिखाई दिया। उसके चबूतरे की अनगिनत सीढ़ियाँ थीं। सीढ़ियों पर दूकानें लगी थीं। शेरू कुछ नहीं बोला। शायद उसको पता न था, ये क्या मकान हैं। थोड़ी देर में हम एक बाग में पहुँच गये। वहाँ हमें किसीने जरा भी नहीं टिकने दिया। हम दोनों फटकारें खाते हुए बाग के दूसरे फाटक से सड़क पर पहुँचे। सड़क पर गाड़ियों की इतनी भीड़ थी कि सड़क पार करते न बनता था। शेरू ज्यों-त्योंकर सड़क पार कर गया। मैं अकेली ही इस पार रह गयी शेरू ने भों-भों करके मुझे बुलाया। पर मेरी हिम्मत न हुई। शेरू तंग आकर मेरे पास आ गया। मैं पार जाने को राजी न हुई। उसने मुझे अपनी पीठ पर चढ़ा लिया। मै पार तो हो गयी, पर हम दोनों बाल-बाल बचे। रास्ते में एक स्कूल पड़ा। सब बच्चे बाहर थे। कोई चाट खा रहा था, कोई फल। शेरू बिलकुल न घबराया, पर मेरा देखते ही दम निकल गया। मैं ठिठक गयी। शेरू समझ गया। वह रुका और मुझे साथ लेकर चला।



आखिर हम ऐसी सड़क पर आये, जिसके दोनों ओर ऊँचे मकान थे।

इन बच्चों में से किसीने भी हम पर पत्थर नहीं फेंके। हमारी तरफ देखा तक नहीं। टन-टन-टन की आवाज आयी। सब बच्चे जाने कहाँ चले गये। मैं समझी, मैंने सपना देखा। शेरू बोला–'यह शाला है।'

हम आगे बढ़े। एक मिठाईवाले की दूकान आयी। वहाँ से एक गली में मुड़े। एक फाटक पर शेरू ठिठक गया। मुझसे बोला–'तुम्हारी रमारानी यहीं हैं और मेरी लक्ष्मी भी यहीं होनी चाहिए।'

शाम का वक्त था। दिये जल चुके थे। शेरू ऊपर मुँह करके हल्के से भूँक दिया और ऊपर की खिड़की की तरफ ताकने लगा।

ऊपर से किसीने भी नहीं झाँका। शेरू ऊपर की ओर फिर जोर से भूँका। तब कहीं किसीने खिड़की में से सिर निकाला। ये हमारी रमारानी के पापा थे। घर का दरवाजा खुला। मेरे नाम की पुकार हुई। आखिर हम सुरक्षित घर पहुँच गये।

हमें मकान के अन्दर कर लिया गया। शेरू को साफ किया गया। मैंने अपने को अपने-आप साफ कर लिया। शेरू पलंग के नीचे लेट गया। मुझे कुर्सी पर ज़गह मिल गयी। मैंने सुना, सब आपस में यही कह रहे थे कि इन दोनों ने घर ढूँढ़ कैसे लिया? भूख के मारे अधमरे हैं। शाबाश शेरू, शाबाश मखमली!

रमारानी चिल्ला पड़ी– 'अरे-अरे, मेरी मखमली तो लँगड़ी हो गयी। इसने अपनी टाँग में चोट मार ली।'

लक्ष्मी बोली– 'जरा उसके कान तो देखो। एक कान भी खो आयी। पूँछ के बाल गायब! यह तो अपनी सुन्दरता ही गँवा आयी।'

रमारानी बोली– 'कुछ परवाह नहीं। बुद्धिमान् और चालाक तो है। इतनी अनोखी बिल्ली तुमने दुनिया में कहीं देखी है?'

केसरिया खीर

:३४:

मुझे जल्दी ही पता चल गया कि दिल्ली शहादरे की शाला जैसा घर नहीं है। पहले-पहले तो मुझे वह घर बिलकुल न जँचा। मैं शांतिप्रिय, वहाँ शोर ही शोर। मैं नींदप्रिय, वहाँ खड़बड़ की वजह से एक पल झपकी लेना मुश्किल। मैं गोदी-पसंद, वहाँ कोई पूछनेवाला नहीं। रमारानी सदा काम में व्यस्त। न यहाँ शाला का कमरा, न बैठने के लिए गद्दीदार कुर्सियाँ।

यहाँ एक पलँग जरूर था। वह मुलायम भी था। लेकिन शम्भूबाबू ने एक दिन मुझे तकिये पर बैठे देख लिया। वह बुरी तरह बिगड़ पड़े। उसके बाद पलँग पर चढ़ने की कभी मेरी हिम्मत न हुई।



रसोइये ने रमारानी से वही बात कही।

एक रात रसोईघर काफी गरम था। मैं हवा लेने बाहर चली गयी। वहाँ मुझे कुछ सीढ़ियाँ दिखाई दीं।

सीढ़ियों के इधर-उधर रेलिंग लगी हुई थी। ऊपर मैं कभी नहीं चढ़ी थी। मेरा मन चल आया। मैं उन पर चढ़ गयी। सड़क पर आने-जानेवालों को देखने लगी।

दो लड़के पास आ गये। मुझे छेड़ने लगे। मैं अन्दर थी। इसलिए वे मेरा कुछ न बिगाड़ सके। इतने में एक बिल्ली आ गयी। वह एक गरीब बिल्ली थी। उसकी एक आँख फूट चुकी थी। आधी पूँछ कट चुकी थी। उसका कोई अपना घर न था। इधर-उधर घूम-फिर खाना जुटा लेना उसका काम था। जैसे ही उसने मुझे देखा, वह बातें करने लगी। पूछने लगी, तुम कहाँ से आयी हो? मैंने उसे सब कुछ बता दिया। यह भी बताया कि कैसा बढ़िया-बढ़िया खाना मुझे मिलता है। मैंने अपनी शैखी बघारने में कोई कसर न रखी। तुम जानते हो कि मैं बहुत घमण्डी हूँ।

हम दोनों बहुत देर तक बातें करते रहे। अन्त में मेरी मित्र बोली–'अब मैं जाती हूँ। नमस्ते, फिर कभी मिलूँगी।' दूसरे दिन मैंने रसोईघर में बड़ा शोर सुना। मैं जाग गयी। मैंने सुना, रसोइया कह रहा था, बहनजी, केसरिया खीर गायब। कुछ भी कहिये, मखमली का काम है। इसे घर से निकाल बाहर करना होगा।

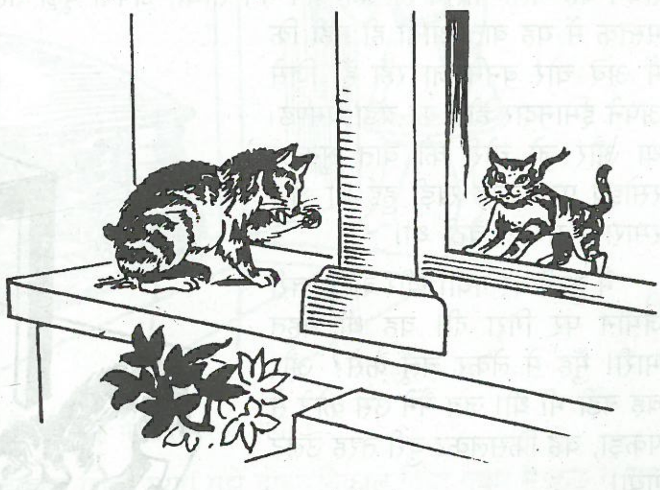
मैं घबरा गयी। मेरा दिल धुक-धुक करने लगा। मैंने मन ही मन कहा, मैंने केसरिया खीर का नाम भी नहीं सुना। यह बात है, तो है क्या? मैं चुपचाप अपनी जगह लेटी रही।

इतने में मैंने रमारानी को आते सुना। रसोइये ने वही बात उनसे कही।

उस दिन कुछ लोगों की दावत थी। रसोइये ने उन्हींके लिए केसरिया खीर बनायी थी। उसे ठंडी करने के लिए उसने रसोईघर में रख दी थी। और अब देखो, तो गायब। बस, दो-चार फुटके फर्श पर जरूर पड़े थे।

मेरी नयी सहेली :३५:

मुझे रसोइये पर बड़ा गुस्सा आया। वह क्यों मुझ पर खीर चुराने का इल्जाम लगाता है? जब रानी मेरे पास आयी, तो मैं उठ खड़ी हुई। उनसे दूर भागती पूँछ खड़ी कर ली। ना, ऊँची कर ली। केसरिया खीर की चोरी और मेरे सिर! मैंने अपनी उम्र में कभी खीर नहीं खायी। हाँ, एक दिन जब मुझे मेरा खाना अच्छा नहीं लगा था, तो दहेनड़े से दही जरूर चाटा था। यह रसोइये की शरारत है। वह मुझे बदनाम करना चाहता है और रमारानी को सुना-सुनाकर यह सब कहता है। मैं तुम्हारी जो हूँ।


देखा, वही कानी बिल्ली अपने होंठ चाट रही है।

रसोइया दिनभर बिगड़ा रहा।

उसने और खीर तैयार की। मुझे खाने को कुछ नहीं दिया। जब मैंने म्याऊँ-म्याऊँ करके माँगा, तो मुझे रसोईघर से बाहर निकाल दिया। मैं रूठकर पैड़ियों पर जा बैठी।

क्या देखती हूँ, वही कानी बिल्ली वहाँ मौजूद है। वह अपने होंठ चाट रही थी। जैसे ही उसने मुझे देखा, बोली–'घर में से बड़ी अच्छी गन्ध आ रही है।'

मैं बोली–'हाँ, आ तो रही है। आज दावत जो है। लोग खाना खाने बैठे हैं।'

मेरी सहेली बोली–'उनके लिए क्या बना है?'

मैं बोली–'बहुत-सी चीजें बनी हैं। केसरिया खीर और तरह-तरह की चीजें। वे मुझे थोड़ी देर में जरूर बुलायेंगे। सभी तो मुझे देखना चाहते हैं।'

बूढ़ी पूँछकटी बिल्ली–'इसमें कोई सन्देह नहीं, तुम बड़ी सुन्दर हो। खूब मोटी हो, खूब मुलायम हो, खूब चिकनी हो, इसमें कोई अचरज नहीं। तुम्हें हर कोई देखना चाहेगा। मैं तो बूढ़ी हूँ, बदसूरत हूँ। मुझे तो कोई खाने को टुकड़ा भी नहीं देता। मेरी तो कोई बात भी नहीं पूछता। तुम मेरे लिए कुछ ला सकोगी?'

वह भटकी बूढ़ी बिल्ली यह सब कह गयी। वह बहुत भूखी जो थी। बोली–'तुम्हें वह नहीं भुला सकते', यह कहती-कहती वह मेरा मुँह देखने लगी। यह देख मैंने अपना कटा कान उससे एक तरफ कर लिया कि कहीं वह मुझे कनकटी न समझे। फिर मैं बोली–'हाँ-हाँ, मैं तुम्हारे लिए सब कुछ करूँगी।' यह कहकर मैं अन्दर चल दी। देखूँ, मैं क्या कर सकती हूँ।

केसरिया खीर नम्बर दो क्या हुई? :३६:

बच्चो, अब सुनो। घमण्डी होने का क्या परिणाम होता है। शेखी बघारना कितनी बुरी बात है। मैं अन्दर पहुँची। थाल में तरह-तरह की मिठाइयाँ सजी थीं। एक बड़ी परात में केसरिया खीर फैली हुई थी सबमें वह भली मालूम हो रही थी। मैंने सोचा, अपनी बूढ़ी सहेली के लिए यह भोजन ठीक रहेगा। मेरे मस्तक में यह बात आयी ही नहीं कि मैं अब चोर बनने जा रही हूँ, जिसे अपने ईमानदार होने का बड़ा घमण्ड था और जो चोरी की बात सुनकर रसोइये पर बिगड़ खड़ी हुई थी और रमारानी से रूठ बैठी थी।



मैं कुर्सी पर गयी। खीर की तश्तरी जमीन पर गिरा दी। वह थी बहुत भारी। मुँह में लेकर चलूँ कैसे? और वह बड़ी भी थी। जब मैंने उसे कोने से पकड़ा, वह फिसलकर बुरी तरह उलट गयी।

जब मैं इस काम में लगी हुई थी,

तो कोई आया। वह थी, मेरी सहेली भूखी बिल्ली। पूँछकटी और कनकटी। वह रेलिंग पर चढ़कर ऊपर आ पहुँची थी। केसरिया खीर देखकर लगी लपलप चाटने ! मुझसे इतना न पूछा कि 'मुझे आज्ञा है' वह इतनी जल्दी चट कर गयी कि मुझे विश्वास हो गया कि पहली खीर भी इसीने खायी। मैं तो सिर्फ खीर का स्वाद ले पायी कि सारी खीर साफ।

अब मुझे रसोइये की याद आयी। सोचने लगी कि अगर इस वक्त वह आ जाय और हमें देख ले, तो क्या कहे?

मैं अपनी सहेली से बोली–'अब यहाँ से जल्दी ही चल देना चाहिए और पकड़े जाने से पहले घर से दूर भाग जाना चाहिए।'

रातभर मैं घर लौटने की हिम्मत न कर सकी। बहुत डरी हुई थी। जब भी लोग कसूर करते हैं, तो कायर हो जाते हैं। मैं अपनी बूढ़ी सहेली से बोली–'मुझे अपने घर ले चल।'

वह बोली–'मेरा कोई घर ही नहीं।' इसलिए हम दोनों रातभर सड़क के किनारे लेटे रहे। जब किसीको आते देखते, तो छिप जाते।

सुन्दर वह, जो सुन्दर काम करे :३७:

दूसरे दिन जब मैं घर आयी, तो एक टोकरी में रख दी गयी। टोकरी के ऊपर एक ढक्कन कस दिया गया। मैं उसमें कैद कर दी गयी। टोकरी एक गाड़ी में रख दी गयी। गाड़ी सड़क पर खड़-खड़ करती हुई चल पड़ी। मैं 'म्याऊँ-म्याऊँ करती रही, पर किसीने उस ओर ध्यान नहीं दिया।



दूसरे दिन टोकरी में कैद कर दी गयी।

आखिरकार गाड़ी रुकी। टोकरी का ढक्कन खोला गया। मुझे बाहर निकाल दिया गया। मैं कुछ न समझ पायी कि मैं कहाँ हूँ। क्या यही मेरा नया घर है, जहाँ मुझे रहना होगा ? यह एक बहुत छोटी-सी कोठरी थी। इसमें एक बुढ़िया रहती थी। उसका एक छोटा लड़का था। उस छोटे लड़के ने मुझे पकड़ लिया।

उसने मुझे पेट से पकड़ा। बहुत दबाकर पकड़ा। मैंने सोचा, न जाने अब क्या-क्या आफत मुझ पर आयेगी। मुझे अपने पहले दिन याद आ गये। मुझे वह खलिहान याद आ गया, जहाँ मैं पहली बार पकड़ी गयी थी। वह लड़का मुझे अपनी बुढ़िया माँ के पास ले गया। उसने मुझे उसकी गोद में डाल दिया।

उस बुढ़िया ने मुझे प्यार से थपथपाया। बोली–'झद्धा बेटा, इस बिचारी बिल्ली को सताना नहीं।'

झद्धा बोला–'नहीं दादी, बिलकुल नहीं। पर रमारानी कहती हैं कि यह बड़ी खराब बिल्ली है। इसने क्या किया?'

बुढ़िया बोली–'मुझे भी दुःख है। इसने खाने की चीजें चुरायी हैं। पर यहाँ तो इसके खाने के लिए कुछ भी नहीं।'

झद्धा बोला–'यह है तो बड़ी सुन्दर।'

दादी बोली–बेटा झद्धा! सुन्दर वह जो सुन्दर काम करे।'

दादी

:३८:

बूढ़ी दादी की छोटी-सी दूकान थी। चाय भी बेचती थी। पास रहनेवालों के लिए साबुन की टिकिया और मोमबत्तियाँ भी रखती थी। उसका यह कहना ठीक ही था कि मेरे लिए उसकी दूकान में चुराने के लिए कुछ नहीं। साबुन मैं खा नहीं सकती। चाय मैं छूती नहीं। मोमबत्ती मेरे किस काम की? दूकान की खिड़की मुझे बहुत पसन्द है। जब भी धूप निकलती, तो मैं वहीं जा बैठा करती। खिड़की के शीशों पर जो मक्खियाँ आकर बैठतीं, उनको पकड़ती रहती। यह अच्छा खेल था। इसमें जी लगा रहता। इस खेल से मैं जल्दी ही ऊब गयी। उदासी ने मुझे आ घेरा।



खिड़की के शीशे पर बैठी मक्खियाँ पकड़ती रहती।

दादीजी का यह हाल था कि वह सारे दिन दूकान पर ही रहती थीं। कभी खाली न बैठतीं। कुछ-न-कुछ करती ही रहतीं। जब कोई ग्राहक आता, तो उनका चेहरा खिल उठता। उससे मीठी-मीठी बातें करतीं। उसके घर का हाल पूछतीं। चाहतीं कि वह दूकान पर ही बैठा रहे। कभी-कभी तो ग्राहक से मेरी चर्चा छेड़ बैठतीं। कहतीं, इसका नाम मखमली है, मखमली! मुझे रमारानी ने इसे दिल्ली से भेजा है। यह दिल्ली की बिल्ली है। तुम रमारानी को जानते हो? वही रमारानी, जिसे मैंने गोद में खिलाया था और जिसने बचपन में मेरी छाती का दूध पिया है। यह उसकी बिल्ली है, इसलिए मुझे बहुत प्यारी है। देखो, कितनी सुन्दर है। जब कोई ग्राहक न होता तो दादीजी दूकान के फर्श पर बैठकर या तो कुछ सीती रहतीं या बुनती रहतीं। वह अक्सर अकेले-अकेले भी बात करती रहती थीं। उनके पास अपने नाती झद्धा के सिवा और कोई बात न होती थी। झद्धा सारे दिन शाला में रहता। उन्हीं दादीजी को मैंने यह

कहते सुना कि झब्बा मेरी इकलौती बेटी का बेटा है। वह कुछ ही उमर में भगवान् को प्यारी हो गयी। अब यह झब्बा ही मेरा सहारा है। उसके बिना सूना-सूना-सा लगने लगता है। उनकी गुनगुनाहट, उनकी सलाइयों की खटखटाहट से मुझे नींद आने लगती। मैं सो जाती। जब झब्बा शाला से आकर शोर मचाता, तब मेरी आँख खुल जाती। वह दादी की गोद में आकर बैठ जाता। उन्हें प्यार करता, उनका प्यार पाता और उन्हें शाला का हाल बताता। कहता, आज मैंने यह पाठ पढ़ा। इतने सवाल निकाले, यह खेल खेला, वह खेल खेला।

●

मैं भाग निकली :३९:

सचमुच ऐसी अच्छी दादी और इतने अच्छे झब्बा का घर मुझ अभागिन के योग्य न था। मैं ठहरी बेहद लालची, घमण्डी। मुझे चाहती थी माल-मलाई। भला फिर साबुन की दुकान मुझे कैसे भाती! बस, एक दिन बरसते में ही भाग निकली। बाहर पाँव ही रखा था कि मेह ने जोर से बरसना शुरू किया। जी में आया लौट पड़ूँ। लेकिन मन पक्का करूँ-करूँ कि दादी ने बौछारों से बचने के लिए दरवाजा बन्द कर लिया और कुण्डी लगा ली।



इतने में एक घर दिखाई दिया।

मैंने सोचा, अब अन्दर जाकर क्या होगा? रातभर बाहर ही रहा जाय। बस, मैं चल पड़ी। मेघ खूब बरस रहा था। मैं तर-बतर हो गयी। खुला मैदान, बचने की जगह ही न थी। मैं अपनी धुन में चलती ही चली गयी। मेरी हड्डी-हड्डी दुखने लगी। मेरी टाँगें दुखने लगीं। कभी-कभी लड़खड़ा उठती। आगे चलने को जी न होता। इतने में एक घर दिखाई दिया। उसकी भीत पर चढ़ गयी। सोचा, उसके अन्दर मेह से बचने के लिए कोई-न-कोई जगह मिल ही जायगी।

अन्दर एक दरवाजा दिखाई दिया। उसमें एक छोटा-सा सूराख था, मानो वह मेरे लिए ही बना था। मैं उसके अन्दर खिसक गयी। वह तबेला था। काफी गहरा था। उसमें घोड़े भी थे। घास का भारी ढेर भी था। घोड़ों की टाँगों से कुछ दूर मैं एक कोने में जा लेटी; लेकिन मेरा तो जोड़-जोड़ दर्द कर रहा था और तर-बतर होने से बुरा हाल था। नींद नहीं आयी। बरसाती रात का इतना लम्बा सफर जितना मेरा नुकसान कर गया, मुझे उतने नुकसान का खयाल भी न था। लेटे-लेटे सहादरे की शाला याद हो आयी। मैंने अपनी भूल से उस शाला को छोड़ा था। फिर मुझे अपनी अन्नो रानी की याद आ गयी। उसके साथ सुख से दिन बिताने की याद ने मुझे और दुःखी बना दिया। अब अपनी जन्मभूमि खलिहान की याद आ गयी। मैं अपने को कितनी भाग्यशाली समझूँ, अगर मैं अपनी अम्मा को देख पाऊँ! फिर वही खलिहान, वही घास मेरी आँखों के सामने हो। उसे छोड़ते हुए जितना मैंने सुख माना था, जितनी मैं खुश हुई थी, वहाँ आज लौटने पर उतना ही सुख मानूँ, उतनी ही खुश होऊँ।

मैं अपने इन विचारों में मग्न थी। कभी-कभी दुःखी भी हो उठती थी। कभी अपने को कोसने लगती

थी कि इतने में पास ही घास में कुछ सरसराहट सुनाई पड़ी। मैंने सिर ऊँचा किया, इधर-उधर ताका। मैंने पास ही एक कोने में पुआल का ढेर देखा। मुझे अपनी खलिहानवाली जन्म-सेज की याद आ गयी। माँ का प्यार, भाई-बहनों का खिलवाड़ सब आँखों के सामने आ गया।

मैं लपककर उसी ढेर पर जा पहुँची। वहाँ क्या देखती हूँ, एक सफेद बिल्ली अपने बच्चों के साथ सोयी पड़ी है।

फुल्लू, टिम्मी और पुन्नू :४०:

यह सफेद बिल्ली बिलकुल साफ-सुथरी थी। इसका बदन भरा हुआ था। इसके बच्चे बड़े सुन्दर और बड़े प्यारे थे। उन्हें देखकर मुझे पहले ईर्ष्या हुई और फिर डाह हो गयी। उन बच्चों का घर भी खूब गरम और सुन्दर था। जैसे-जैसे मेरी आँखें उन बच्चों को देखतीं, वैसे-वैसे ही मेरा बचपन मुझे याद आने लगता। कभी-कभी तो ऐसा मालूम होने लगता कि मैं बच्चा ही बन गयी हूँ और उन्हींकी तरह अपनी माँ की गोद में निश्चिंत लेटी हूँ। इतनी मुद्दत के बाद ऐसा जागता हुआ सपना मुझे याद आया। अब मैं एक दीन-दुखिया थी, मैलीकुचैली थी, सर्दी से कँपकपा रही थी, तर-बतर थी और बे-घर की थी।



एक ने माँ की कोख दबायी और दूसरा पीठ पर जा बैठा।

सुन्दरता की बात सोचकर तो मैं घबरा उठती। मेरा बाँया कान बदशकल हो चुका था। दिल्ली जाते वक्त अपनी एक टाँग लँगड़ी कर चुकी थी। अब मेरी वह शकल कहाँ थी, जो कभी बचपन में थी। आँखों में भी तो वह चमक न रही थी। मन बोल ही तो उठा कि यह सफेद बिल्ली मुझसे कहीं सुन्दर है। मैं हिम्मत के साथ कह सकती हूँ कि उस वक्त मेरी शकल डरावनी थी। मेरी देह गन्दी थी। पता नहीं, मैं बिल्ली थी या कुछ और थी। क्योंकि जब बच्चों ने मुझे देखा, तो वे डर के मारे म्याऊँ-म्याऊँ करने लगे।

एक बच्चे ने अपनी नाक से अपनी माँ की कोख दबायी। दूसरा अपनी माँ की पीठ पर जा बैठा। तीसरे ने अपना पंजा उठाया और माँ की नाक पर जमाया। इससे माँ जाग पड़ी।

उसने जँभाई ली और फिर उठकर अँगड़ाई ली। बड़े प्यार से बोली: प्यारे बच्चो ! क्या बात है? टिम्मी, तुम तो जंगली होती जाती हो। कहीं इस तरह माँ को जगाया करते हैं! फुल्लू तुरत पीठ पर से उतरो। पुन्नू, मुझे इस तरह न सताओ। माँ री माँ! ये बच्चे भी क्या बला होते हैं! चलो, चुपचाप सो जाओ। मुझे भी सोने दो।'

मैं दुःखी होती हूँ :४१:

जैसे ही सफेद बिल्ली ने अपने बच्चों से यह बात कही, वैसे ही उसनें मुझे देख लिया। उसने मेरी ओर

ताका। अपनी गर्म सेज से उठ खड़ी हुई।

'मूरख बच्चो ! इस गली-गली घूमनेवाली बिल्ली से डरते हो? देखते नहीं हो, यह बीमार है। सिर से पैर तक भीगी हुई है।'

बच्चों को इस तरह समझाकर वह मेरे पास आयी। दया करके मुझसे बोली : 'जीजी, ऐसा मालूम होता है कि तुम बे-घर-बार हो। आओ, यहाँ मेरे पास गरम बिस्तर पर लेट रहो। जरा अपने को सुखा तो लो।'

मैं उसकी बात मान गयी। क्या करती? मुझसे तो खड़ा भी नहीं हुआ जाता था। मैं वहीं लेट गयी, जहाँ अभी बच्चे लेटे हुए थे। गरम-गरम जगह ! तबीयत खुश हो गयी। बच्चों को मेरा वहाँ लेटना पसन्द नहीं आया। मैं एकदम अपरिचित, वे एकदम छोटे !

टिम्मी बोला : 'देखो-देखो, यह कितनी बदसूरत और गन्दी है।' टिम्मी सबमें ज्यादा गुस्ताख भी था।

फुल्लू, जो अपनी माँ की तरह एकदम सफेद था, बोल पड़ा : 'यह कीचड़-कीचड़ हो रही है। जहाँ यह लेटेगी या बैठेगी, मैं वहाँ फटकूँगा भी नहीं।'

तीसरा बच्चा पुन्नू बोला। मैं गँवार बिल्लियों के साथ नहीं रह सकता। इन्हें न बात करना आता है, न उठना-बैठना। इसे इतनी भी तमीज नहीं कि दूसरे के बिस्तर पर किस तरह बैठते हैं। आयी और धम्म से बैठ गयी। इसे तो यहाँ पर आना ही नहीं चाहिए था। कहीं इधर-उधर जमीन पर पड़ी रहती। इतनी तो जमीन पड़ी है।'

उनकी माँ बोली : 'बच्चो, तुम्हें शरम नहीं आती। सोचो, तुम बीमार होते, भींगे होते और गन्दे होते, तो क्या तुम लेटने के लिए अच्छा बिस्तर न चाहते? और क्या तुम गरम होना पसन्द न करते? जिस तरह की तुम बातें कर रहे हो, उसे सुनकर मुझे दुःख होता है। तुम इतना भी नहीं समझते कि तुम यह कहकर अपने को गँवार साबित कर रहे हो। किसी दिन भी तुम तकलीफ में पड़ सकते हो। और, हो सकता है कि उस वक्त तुम्हारे पास कोई भी न हो।'

सब बच्चे शरमा गये और एकदम चुप्पी साध गये। मैं चुपचाप लेट गयी। इतनी दुःखी थी कि कुछ न बोली। मैंने उस वक्त कुछ बोलना भी चाहा था, जब मुझे बच्चों की माँ ने गलिहारी बिल्ली कहकर मेरा परिचय कराया था, पर चुप रह गयी थी। मेरी सारी देह तो एक क्षण के लिए लज्जा और क्रोध से जल उठी थी।

मेरी कपूरी जीजी :४२:

दूसरे दिन जब साईस घोड़ों को दाना देने आया, तो वह सफेद बिल्ली से बातें करने लगा। उसे 'कपूरी' कहकर पुकारा।

मैं तो सुनते ही थर-थर काँपने लगी। वह दयालु बिल्ली, जिसने मेरे साथ इतनी शिष्टता दिखलायी, मेरी अपनी ही सगी बहन थी।

कपूरी उसका नाम था। वह बिलकुल सफेद थी। ऐसी ही मीठी आवाज थी। जब हम बच्चे थे, तो वह हमेशा हम पर दया किया करती थी। इसीलिए वह बड़ी खुश थी। आराम में थी, खाती-पीती थी।

इतना ही अच्छा हुआ कि उसने मुझे पहचाना नहीं। मैं बहुत खुश हुई, क्योंकि मैं लज्जा से मरी जा

रही थी। मैं इतनी बुरी अवस्था में थी कि मैं नहीं चाहती थी कि मैं पहचानी जाऊँ।

जब मैं शाला में थी, तो हमेशा चाहती थी कि किसी दिन कपूरी आकर मिल जाय और आज मेरा यह हाल था कि मैं यह चाहती थी कि मैं कहीं छिप जाऊँ और कपूरी मुझे न देख सके। क्योंकि कपूरी ने ही तो मुझे बाहर दुनिया देखने जाने से रोका था। मैं उस वक्त घमण्ड में इतनी चूर थी कि मैंने अपनी भूल मानी ही नहीं। इसके अतिरिक्त यह विचार भी मुझसे सहन नहीं हो रहा था कि वह इतनी सुखी और मैं इतनी दुःखी ! वह दाता मैं भिखारिन ! वह तीन बच्चों की माँ और मैं निपूती !

उसी रात जब वह और उसके बच्चे सो रहे थे, मैं द्वार के उसी सूराख से खिसक निकली और भाग खड़ी हुई। मेरी इतनी भी हिम्मत न हुई कि मैं अपनी बहन को धन्यवाद देती और बिदाई नमस्ते करती।●

फिर यात्रा पर :४३:

अब मेरा बुरा हाल था। इतना बुरा, जितना कभी नहीं हुआ था। सर्दी खूब जोरों पर थी। मैं बीमार भी थी। हवा तीर की तरह देह में घुस जाती थी।

कपूरी को जिस दिन छोड़ा, उस दिन मेरा बहुत ही बुरा हाल था। एक-दो बार तो जी में आया कि उसीके पास लौट चलूँ। अपना सब भेद खोल दूँ। लेकिन मेरे अभिमान ने मुझे वैसा नहीं करने दिया। रातभर सड़क पर ही भूख से तड़पती पड़ी रही।

दूसरे दिन भी आकाश पर काली घटाएँ छायी हुई थीं। हवा बरफ जैसी ठंडी थी। सड़क पर चल जरूर रही थी, पर पता नहीं, मरी हुई चल रही थी या जीवित। जैसे ही मुझे मकानों के अन्दर की आग चमकती हुई दिखाई देती, वैसे ही मुझमें कँपकपी हो उठती। जी आग के पास पहुँचने को मचल उठता। पर मनचाहा होता ही कब है ? फिर अभिमानियों को तो पग-पग पर आफतों का ही सामना करना पड़ता है। मैं चली जा रही थी और चली जा रही थी। मुझे कुछ पता नहीं था कि मैं कहाँ हूँ ?



नहीं, नहीं ! तुम जो दाम माँगो, वह मैं दूँगा।

चलते-चलते एक नदी आ गयी। बारिश की वजह से पानी गँदला था। कहीं-कहीं तो काला था। मुझे तो पानी की शकल से ही घृणा हो गयी थी। फिर भी मैं पास के पुल के नीचे जा बैठी। इस वजह से कि पुल की तरफ निचान और नदी की तरफ उचान था। यहाँ मरी हुई मछली का एक टुकड़ा पड़ा हुआ था। मैं उसी को खाने लगी। मैं उसे स्वाद लेकर खा ही रही थी कि किसीने मुझे आ दबोचा। एक आदमी की आवाज सुनी गयी। वह यह थी, 'खाल बढ़िया

है, रेशम जैसी मुलायम है। बल्लू दादा इसे बेचकर दाम उठायेंगे। एक आदमी की आवाज सुनी गयी। वह यह थी, 'खाल बढ़िया है, जैसी मुलायम। बल्लू दादा, इसे बेचकर आधे तुम्हारे, आधे मेरे। इसकी खाल के खासे पैसे उठेंगे।'

बल्लू बोलाः 'टल्लू भैया, नहीं, नहीं! यह ठीक नहीं, तुम जो माँगो, वह मैं इसके दूँगा। मैं जहाज पर रहता हूँ, यह मेरे साथ रहेगी। जब मैं घर आऊँगा, तो मेरी धर्मपत्नी के पास रहेगी। बच्चे इससे खेला करेंगे। इसके बाल बड़े मुलायम हैं। यह सुन्दर है। कभी बड़ी सुन्दर रही होगी।'

दूसरा आदमी बोला : 'अच्छा-अच्छा, जैसी तुम्हारी मरजी। इसके देखने से ही पता चलता है कि बिना घर-बार की है। इसलिए यह अब तुम्हारी हो गयी। मैं इसका क्या करूँगा। बल्लू भैया, नमस्ते! भगवान् तुम्हारा भला करे और तुम खुश-खुश घर लौटो। तुम्हारा जहाज कब छूटेगा?

'नमस्ते, नमस्ते आज ही रात को।' पूसी अब चलो। यह कहकर उस आदमी ने मुझे उठा लिया और चल पड़ा।

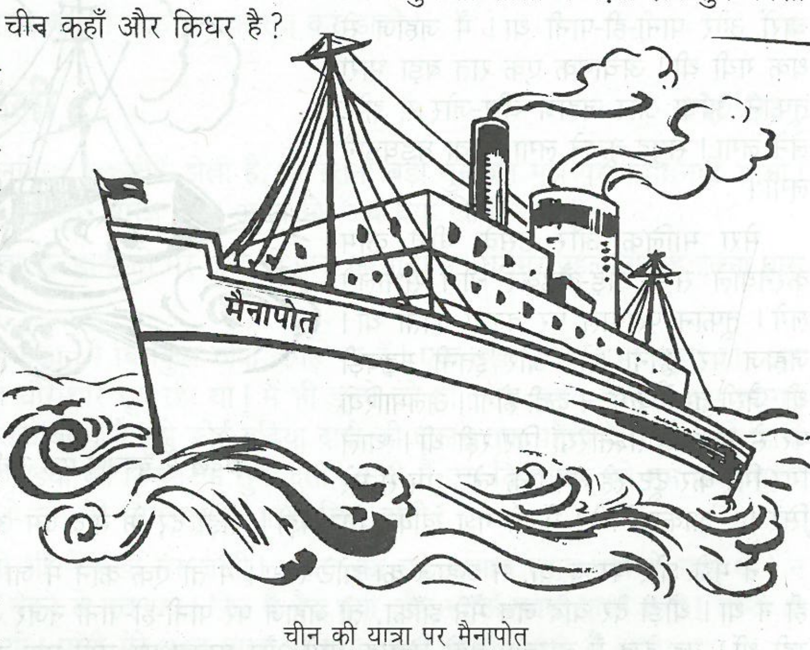
मुझे अचरज होने लगा कि यह हुआ क्या? देखती हूँ कि मेरे भाग्य में अब कहाँ का दाना-पानी है। क्योंकि यह तो मैं जान ही गयी कि मेरा नया मालिक मल्लाह है। वह मुझे अपने जहाज पर चढ़ा ले गया। उसके जहाज का नाम था 'मैनापोत'। उसी रात हमारा जहाज खुल गया। मेरा नया जीवन शुरू हुआ।●

नया जीवन, नया नाम :४४:

जोर की हवा चल पड़ी। जहाज लहरों पर झूलने लगा। मेरी तबीयत बिगड़ने लगी। दिनभर तबीयत खराब रही। मेरा मालिक जहाज का कप्तान था। उसका जहाज दूर देश को जा रहा था। उस देश को, जिसे तुम चीन कहते हो। मैंने ऐसी जहाज कभी नहीं देखी थी। लेकिन तुम तो शाला में पढ़ते हो। तुम नक्शा देखकर जान सकते हो कि चीन कहाँ और किधर है?

मैंने मल्लाहों से सुना है कि चीन देश में चाय बहुत होती है। अब मुझे याद आ गया कि एक दिन बूढ़ी दादी ने किसीसे कहा तो था कि जब तुम चीन देश से लौटो, तो मेरे लिए चाय लेते आना।

दो-तीन दिन में मैं ठीक हो गयी। जहाज के नये जीवन में मुझे आनन्द आने लगा। 'मैना' की सवारी अब अच्छी लगने लगी। पहले-पहल तो मैं घबरा गयी थी। मैनापोत के चारों तरफ पानी ही पानी था। सब-का-सब



चीन की यात्रा पर मैनापोत

खारा। इस जहाज पर मैं अकेली बिल्ली थी। मैं सभी की प्यारी बन गयी। चूहों की यहाँ क्या कमी? चाहे जब शिकार मार लिया! इससे भी बढ़कर आनन्द की बात यह थी कि चढ़ने के लिए वहाँ बड़ा सुभीता था। कभी किसी रस्सी पर चढ़ गयी, कभी किसी मस्तूल पर, और कभी किसी छत पर। मुझे तो ऐसा लगने लगा, मानो जहाज हम बिल्लियों के आराम के लिए ही बनाये जाते हैं।

यह तो ठीक ही है कि मेरे नये मालिक को मेरे नाम का पता न था। इसलिए उसको मेरा नया नाम रखना पड़ा। बड़ा बेतुका नाम था, फिर भी बताये देती हूँ। उसने मेरा नाम रखा था 'पुरानी खुर्राट'; लेकिन सब लोग मुझे खुर्राट ही पुकारते थे।

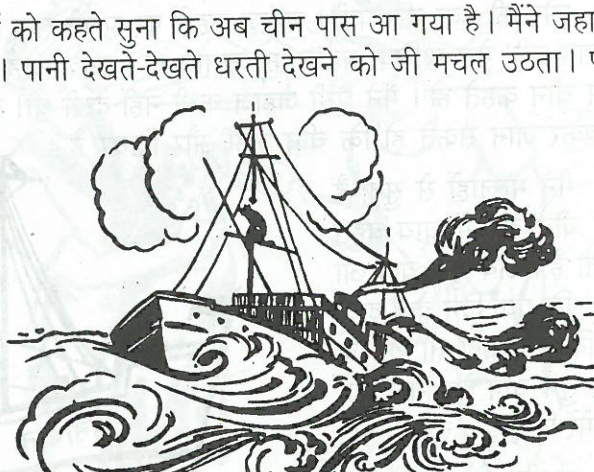
पहले-पहल तो यह नाम मुझे बड़ा बुरा लगा। क्योंकि मैं न बूढ़ी थी, न खुर्राट। फिर मेरा ऐसा भद्दा नाम क्यों रखा गया? लेकिन कुछ ही दिनों में वह नाम मुझे अच्छा लगने लगा। असल में यह नाम मुझे यों दिया गया था कि मैं चूहों का शिकार करने में बेहद चालाक थी। मेरा वार कभी खाली नहीं जाता था। मेरी फुर्ती पर सारे मल्लाह लट्टू थे।

इस मैनापोत पर आनन्द ही आनन्द था।

तूफान :४५:

यह मैं कह चुकी हूँ कि जब हम चले, तब सर्दी के दिन थे। धीरे-धीरे दिन गरम होने लगे। अब मैं बाहर आराम के साथ लेट सकती थी। गर्मी का मौसम मुझे बहुत पसन्द है।

मौसम खूब गरम होने लगा। मैंने मल्लाहों को कहते सुना कि अब चीन पास आ गया है। मैंने जहाज पर से ताका। दूर तक किनारे का पता न था। पानी देखते-देखते धरती देखने को जी मचल उठता। पर अब भी धरती कहीं दिखाई नहीं दे रही थी। चारों ओर पानी-ही-पानी था। मैं जहाज से थक गयी थी। अचानक एक रात बड़ा भारी तूफान आया और जहाज जोर-जोर से झोटे लेने लगा। समुद्र कूदने लगा। हवा घड़घड़ाने लगी।


यह देख मैं चुपचाप एक ऊँची टाँड़ पर जा छिपी।

मेरा मालिक और उसके नीचे काम करनेवाले सभी दौड़-दौड़कर चीजें सँभालने लगे। तूफान पल-पल पर बढ़ता जाता था। जहाज पर इतना शोर और इतनी गड़बड़ी थी, जैसी तुमने कभी न देखी होगी। अलमारियों पर से धड़ाधड़ तश्तरियाँ गिर रही थीं। प्याले गिर-गिर कर टूट रहे थे। एक प्लेट धम से मेरे सिर पर आकर गिरी। मैं तो गश खाकर गिर पड़ी। थोड़ी देर के बाद दम आया।

न मुझे शोर पसन्द था, न जहाज का झोटे लेना। मैं तो एक कोने में जा छिपी। मेरा किसीको ध्यान ही न था। थोड़ी देर बाद जब मैंने झाँका, तो जहाज पर पानी-ही-पानी नजर आया। लहरें जहाज पर आ रही थीं। यह देख मैं चुपचाप पीछे खिसक गयी और मस्तूल पर लगी एक ऊँची टाँड़ पर जा छिपी।

बड़ी-बड़ी सफेद लहरों के कारण बाहर आने की हिम्मत ही न होती थी। वे लहरें समुद्र में फेंक देतीं और मेरा पता भी न चलता, इतनी जोरदार थीं।

मैं अपनी जगह छिपी बैठी रही। बहुत देर तक हिली तक नहीं। अन्त में तूफान शान्त हो गया। जहाज का हिलना-डुलना बन्द हो गया। मैं नीचे उतरकर बाहर निकली। ●

तूफान के बाद :४६:

पहले-पहल तो मैं समझ ही न पायी कि मैं कहाँ हूँ? सब दुनिया ही बदल गयी थी। जहाज कुछ-का-कुछ हो गया था। चीजें बुरी तरह बिखरी पड़ी थीं। निकलने को राह ही न थी। लम्बा खड़ा मस्तूल डेक पर लम्बा पड़ा था। सैकड़ों चीजों का पता ही न था। अपनी जगह कोई चीज ही न थी। मैं मालिक को याद करके 'म्याऊँ-म्याऊँ' करने लगी। लेकिन सब बेकार! कहीं से कोई आवाज न आयी।

न मालिक का पता, और न मल्लाहों का। सब-के-सब गायब। मैं समझी कि तूफानी समुद्र की लहरों से सब डूब गये। उनमें से कभी किसीका कोई पता न चला।

मैं बहुत दुःखी थी। कभी आगे, कभी पीछे। कहीं कोई रास्ता ही न था। ज्यों-त्यों चढ़-चढ़ाकर जहाज के किनारे पर जा पहुँची। सीढ़ियों से उतरी और फिर ऊपर आ गयी। सारा जहाज ढूँढ़ मारा। कहीं किसीका पता न लगा। मैं एकदम अकेली रह गयी।

सूरज निकल आया था। बड़ी शान से चमक रहा था। बड़ी लहरें खतम हो चुकी थीं। हवा शान्त थी। आकाश नीला था। बादल नाम को न था।

कोई यह सोच भी नहीं सकता था कि यह वही नीला आकाश और नीला सागर है, जिसने कुछ ही घंटों पहले यह प्रलय मचा रखा था और यह सब करतूत कर डाली। ●

अवशेष पर अकेली :४७:

मैंने अपने जीवन में अनगिनत तकलीफें झेली हैं, पर इतनी बड़ी मुसीबत मुझ पर कभी नहीं आयी। देर तक सोचती खड़ी रही। पर कुछ समझ में न आया कि अब क्या किया जाय?

घंटेभर बाद मैंने देखा कि पानी तो मेरे और भी पास आ गया है। घंटेभर पहले तो वह इतना पास न था।

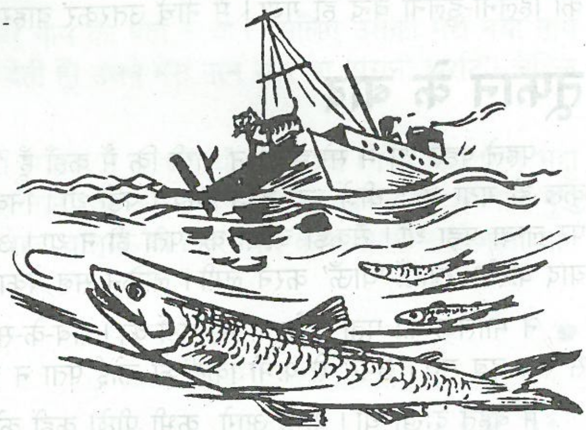
मैंने फिर जाँचा। मालूम हुआ, मैं बिलकुल ठीक जगह पर हूँ। एक तख्ता, जो अभी सूखा था, अब पानी में तैर रहा था। जहाज धीरे-धीरे डूब रहा था। मैं भी डूबने को थी। उस समय मैं सभी कुछ त्यागने के लिए तैयार थी, अगर उसके बदले में मुझे कोई बुढ़िया दादी की दूकान तक पहुँचा देता और मेरे कानों को बुढ़िया की बुननेवाली सलाइयों की टिक्-टिक् सुना देता। कभी मैं उस टिक्-टिक् को मन उबानेवाली समझती थी; लेकिन आज तो वह मेरे लिए सुरीला गाना सिद्ध होती।

जहाज न भी डूबता, तो भी मैं भूखों मर जाती। जहाज का सब सामान समुद्र बहा ले गया था। न जाने कैसे कुछ सूखे बिस्कुट बहने से बच गये। फिर मैं बैठ गयी और म्याऊँ-म्याऊँ करने लगी। जल्दी ही मेरी म्याऊँ-म्याऊँ बन्द हो गयी। पानी मेरे बहूत पास आ गया। मुझे अपनी जगह से हटना पड़ा।

मैं सीढ़ियों से उतर कर नीचे के कमरे में गयी, जहाँ मेरा मालिक सोया करता था। वहाँ से समुद्र दिखाई नहीं देता था। मुझसे ज्यादा मूर्ख कौन हो सकता है कि मैं समझी कि वहाँ पहुँचकर बच सकूँगी। मैं इतनी थक गयी थी कि मैं अपने मालिक के बिस्तर पर गिर पड़ी और सो गयी या बेहोश हो गयी।

रात को मैं जागी या यों कहिये कि होश में आयी, तो किसी तरह ऊपर चढ़ने की हिम्मत की। जैसे फर्श पर पाँव रखा, अपनी जगह कूद आयी। क्योंकि मेरे पाँव फर्श पर नहीं पड़े थे, पानी पर पड़े थे। अब चारों तरफ पानी ही पानी था।

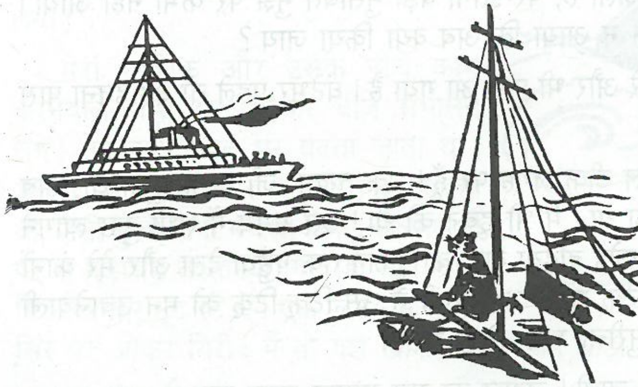
बिस्तर से लगी हुई एक छोटी खिड़की। उससे बाहर निकली और उसी रास्ते बाहर चढ़ गयी। आह! सारा जहाज डूब चुका था। बस, इतना ही टुकड़ा शेष बचा था, जिस पर मैं खड़ी थी। नीचे झाँका तो देखा, तरह-तरह की तैरती मछलियाँ, उनकी बड़ी-बड़ी आँखें!


इतना ही टुकड़ा बचा था, जिस पर मैं खड़ी थी

एक जल-दानव भी देखा। वह घोड़े से भी बड़ा था। उसका बड़ा मुँह, उसके बड़े-बड़े दाँत, मानो वह मुझे जीता ही निगल जायगा। मैं डर के मारे सिकुड़ गयी। जरा पीछे हुई और पीपल के पत्ते की तरह काँपने लगी।

भूख से दम निकलने को ही था :४८:

जहाज के अवशेष पर मैं तीन दिन बिता चुकी थी। तीन दिन क्या थे, तीन बरस थे, तीन सदियाँ थीं, तीन युग थे। ऐसे दिन कभी काहे को बिताये थे। न खाना, न पानी। न धूप से बचने के लिए कोई छत, न बात करने के लिए कोई साथी। बस, केवल जहाज का एक सिरा और मस्तूल का एक टुकड़ा और खारे जल का अथाह सागर!


मैं मौत की घड़ियाँ गिन रही थी

चौथा दिन आया। अब मेरा यह हाल था कि हड्डियाँ ऊपर और खाल नीचे। मांस से तो वास्ता ही क्या? और तो और, बाल तक खाल को छोड़कर गिर पड़े। चलने की तो बात क्या, डोलने तक का दम नहीं। सूरज का प्रकाश अलग मुझे अन्धी बनाये हुए था। मैं कैसे जीवित थी, मुझे पता नहीं।

मैं मौत की घड़ियाँ गिन रही थी। इतने में ही एक आवाज सुनाई दी। यह समुद्र में मछलियों की छप-

छप की आवाज नहीं थी और न पक्षियों की चहचहाहट थी। यह आवाज तो उन आघाजों से मिलती-जुलती थी, जिन्हें मैं तीन दिन पहले सुन चुकी थी और बराबर सुनती रही थी। हाँ, उन जैसी थी, पर उनकी नहीं थी।

'अब भी कोई मेरी सहायता को आ सकता', इस आशा ने मुझमें दम फूँक दिया। मैं उठ खड़ी हुई। मैंने अपने कान खड़े कर लिये या वे अपने-आप खड़े हो गये, मैं कह नहीं सकती।

आवाज पास आयी और पास आयी। आवाज जोर की थी। पानी में छप-छप हो रही थी। कुछ ही देर में आदमी की आवाज सुनाई दी। मुझ बिचारी भूखी बिल्ली के लिए आदमी की आवाज ईश्वर की आवाज थी। एक बरकत थी, आकाशवाणी थी।

मैं जानती थी कि आदमी ही एक ऐसा प्राणी है, जो दया का अवतार हो सकता है। आदमी के बच्चे कुछ भी हुआ करें। सारे मल्लाह, जो डूबकर मर गये थे, वे बहुत ही भले थे। सब-के-सब मुझे प्यार करते थे।

मैं गिर पड़ी। लेकिन फिर उठी और आदमी की आवाज फिर सुनने के लिए कान लगाकर बैठ गयी। वह आवाज बोली : 'यह बिल्ली तो जरूर जीवित है।' वही आवाज फिर बोली : 'हमें जहाज के अवशेष तक पहुँचना ही चाहिए। वहाँ कोई-न-कोई जीवित भी मिलेगा।'

दूसरी आवाज बोल पड़ी : 'नहीं, नहीं महाशय, अब किसीके जीवित मिलने की आशा नहीं। जहाज तो चार दिन पहले ही बड़े भारी तूफान के कारण सागर के तल में जा पहुँचा।'

इसके बाद शोर मचा, तरह-तरह की चर्चा चली। एक रस्सी उस ओर फेंकी गयी, जहाँ मैं पड़ी थी और चार आदमी उस ओर चढ़े, जिस ओर मैं थी।

नये चेहरे :४९:

जब चार आदमियों ने मुझे देखा, तो वे अचरज में पड़ गये। वे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर सके। उन्हें यह विश्वास ही न हो कि मैं बिल्ली हूँ और जीवित बिल्ली हूँ। उनमें से तीन इतने डरे कि वे मेरे पास फटकने की हिम्मत ही न कर सके। न जाने मुझे क्या समझे। वे डर गये।

चौथा बोल पड़ा : 'किससे डरे?'

वे तीनों बोल पड़े : 'हमने सुन रखा है कि बिल्लियाँ जब भूखी होती हैं, तो बहुत भयानक हो जाती हैं। और यह बिल्ली तो अपने ढंग की अनोखी दिखाई देती है।

चौथा आदमी बोला : 'तो शायद तुम यह समझते हो कि यह तुम्हें खा जायगी? तुम्हारी तरफ झपटेगी?'

तीन में से एक बोल पड़ा : मैं तो उसके पास जाने का नहीं। मुझे तो उसे देखते ही डंर लगता है।

मैं इतनी कमजोर, फिर भी मैं उस आदमी की बात सुनकर यह सोचने लगी कि मैं उस पर हँस दूँ। कहूँ, 'मर्द बनते हो और मुझ सुखटी बिल्ली से डरते हो? कहाँ तीन हट्टे-कट्टे तुम और कहाँ मैं बेदम? मैं और तुम्हारी ओर झपटूँ? मेरा तो तुम्हें देखकर ही दम निकला जा रहा है। मैं ही तुमसे डर रही हूँ। मैं तुम्हींको अजीब समझ रही हूँ। और तुम्हें और भी ज्यादा अजीब समझती, अगर तुम भूख से मेरी तरह काँटा बन गये होते!'

जब वे सारा जहाज ढूँढ़ चुके और उन्हें कहीं कोई न मिला, तो वे मेरे पास आये। उनमें से एक, जो निडर था, उसने मुझे उठा लिया और गोदी में ले लिया। वह मुझे अपनी नाव में ले गया। सब उस नाव में सवार हो गये और नाव चल पड़ी।

वे जल्दी ही एक बड़े जहाज के पास आ गये। उस पर वे सवार हो गये। वहाँ उन्होंने मुझे कुछ खाने को दिया। पहले तो खाना मेरे गले से नीचे उतरा ही नहीं। धीरे-धीरे हिम्मत आयी, बल जागा और कुछ खाया। हफ्ते दो-हफ्ते की बेहद तकलीफ के बाद मैं स्वस्थ हो गयी। लेकिन पहले जैसा दम मुझमें कभी न आ पाया। मुझे बराबर बुखार के दौरे आते रहे। मेरी हड्डियों में हमेशा दर्द बना रहता, जो पहले कभी नहीं था। नये जहाज के मस्तूलों पर या रस्सियों पर मैं न कभी चढ़ पायी, न चढ़ने की बात सोची। मैनापोत में तो वे वैसा खूब ही करती थी। मेरी टाँगें अकड़ गयीं। जहाँ-जहाँ से मेरे बाल गिर गये थे, वहाँ फिर उगे ही नहीं। डर, भूख, दर्द सब मिलकर मेरी सुन्दरता को एकदम ले उड़े!

नयी बला में फँस गयी :५०:

इस नये जहाज का नाम था 'रानी'। मैं चार बरस तक इस जहाज पर रही। हम एक गरम देश को चल दिये।

हमारा सारा समय इसी देश में बीता। अनोखी-अनोखी चीजें देखीं। अनोखे रूप-रंग के आदमी देखे। गोरे रंग का आदमी तो वहाँ कोई था ही नहीं। औरत-मर्द सभी एकदम स्याह। उनकी कोई बात समझ में न आती थी। उनकी बोली कुछ और ही थी। वहाँ के पेड़ अलग, फूल अलग, मकानों की बनावट अलग। मेरे लिए एक अजीब देश था।

मैं दिल्ली या शहादरे में रह चुकी थी। मेरा बचपन तो इन्हीं दो जगह बीता था। दिल्ली से जहाज तक पहुँचने में मुझे कुछ ही घण्टे लगे थे। हो न हो, मैं पक्षियों की गाड़ी में बैठकर गयी हूँगी। मैंने अपने मालिक को कहते सुना था कि दिल्ली यहाँ से बहुत दूर है। इतनी दूर, इतनी जल्दी तो चील-गाड़ी से ही आया जा सकता है।

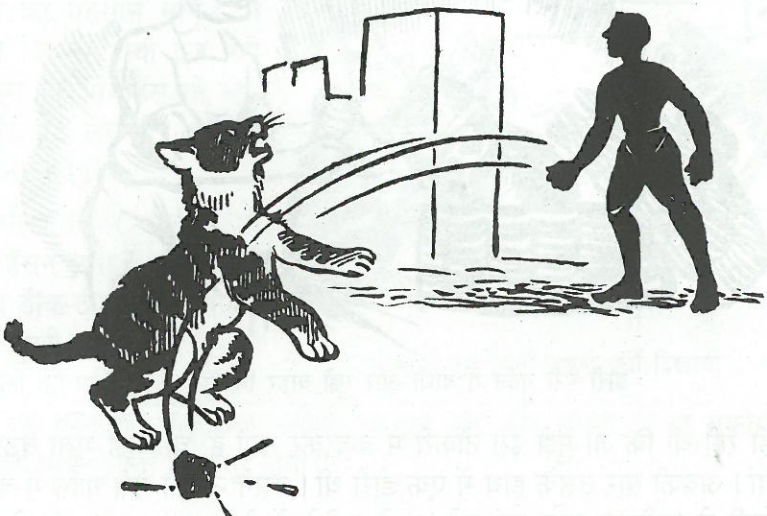
हाँ, तो मैं जो-जो नयी बातें इस नये गरम देश में देखीं, उन सबको कहने बैठ जाऊँ, तो मेरी कहानी बड़ी लम्बी हो जाय। इसलिए कहकर क्या करूँ?

एक दिन वह आ ही गया कि हमारा जहाज भारत यानी दिल्ली के लिए चल ही पड़ा। ये तूफान के दिन थे। रास्ता अच्छी तरह कट गया। जब किनारे लगे, तब सर्दी रंग पर थी। मुझे कँपकपी लगती थी। जी में आया कि इससे तो गरम देश ही अच्छा था। अब मैं बूढ़ी होती जा रही थी। अब तो यही इच्छा थी कि एक छोटा-सा घर मिल जाय। रूखा-सूखा खाने को मिल जाय। लेटी रहूँ और सोती रहूँ।

जैसे-जैसे किनारा पास आने लगा, मुझमें दम आने लगा। जहाज बम्बई के किनारे लगते ही मैं एकदम किनारे आ गयी और सिर पर पाँव रखकर भागी कि कहीं जहाज मुझे लेकर फिर कहीं दूसरी जगह न चल दे। अगर मैं किसी तरह अपना कोई भी पुराना घर पा जाती या बुढ़िया दादी और झब्बा ही मुझे दीख जाते, तो मैं खुशी से फूल उठती और उनके पैरों से लिपट जाती। अब तो न मैं किसीकी हूँ, न कोई मेरा है, ऐसा मुझे मालूम होने लगा है। अकेलापन मुझे काट खाने को दौड़ पड़ रहा था।

अब तो मेरा कोई नाम लेनेवाला भी नहीं रह गया। 'पुरानी खुर्राट' कहनेवाला मालिक भी डूब गया

था। मुझे वह नाम पसन्द भी नहीं था। मैं पुराने खुर्राट सागर की नजरों से भी दूर रहना चाहती थी। हाँ, मुझे आदमियों के साथ रहना पसन्द था और है। मुझे मालूम होने लगा कि मैं अपने पैरों पर आप खड़ी नहीं रह सकती। यानी अपने भरोसे नहीं जी सकती।



पत्थर मेरी टाँग में लगा और मैं जमीन पर गिर पड़ी।

मैं थोड़ी दूर ही चली होऊँगी कि मुझे एक पहियेवाला घर दिखाई दिया। मैं उसमें जा घुसी और न जाने कुछ दिनों के बाद कैसी जगह पहुँच गयी, जहाँ उस घर में से कूद पड़ने को मेरा जी मचल पड़ा। मैं कूद गयी। पेड़ जाने-पहचाने-से लगे। मुझे तो ऐसा ही मालूम हुआ कि मैं दिल्ली और शहादरे के आसपास हूँ। इससे और भी बल आ गया।

इधर-उधर नजर फेंकी। थोड़ी दूर चली। एक मकान दिखाई दे गया। फाटक के अन्दर घुसी। एक दरवाजा और आया। उसे खटखटाया। नतीजा कुछ न हुआ। जरा और आगे बढ़ी। कुत्ता-घर मिला। उसमें कोई कुत्ता न था। हाँ, घर के पास एक बरतन पड़ा था। मैं समझी यह शेरू का खाना है । उसे सूँघने लगी।

इतने में ही एक सनसनाता हुआ पत्थर मेरी तरफ आया। वह मेरी लँगड़ी टाँग में लगा। मैं जमीन पर गिर पड़ी।

नयी आफतें :५१:

जिस आदमी ने मुझे पत्थर फेंककर मारा था, वह मेरे पास आया और उसने मुझे उठा लिया। वह मुझे एक छप्पर में ले गया, जहाँ बहुत-से टोकरे रखे। उसने एक छोटी-सी टोकरी निकालकर उसमें मुझे रखा और ढक्कन से ढँक दिया। वह चल दिया। मैं अकेली रह गयी।

हुआ यह कि एक कुत्ता आया। उसने मेरी टोकरी को सूँघा। मैं घबरा गयी और डर गयी। इतना ही अच्छा था कि मेरी टोकरी जमीन पर नहीं थी, मेज पर थी। इसलिए कुत्ता मुझ तक पूरा-पूरा नहीं पहुँच सकता था। एक बार उसने मेरी टोकरी को अपनी थूथड़ी के जोर से हिलाया भी, लेकिन गिरा न सका।

इसलिए छोड़कर चल दिया। मेरे जी में जी आया।



डोरी मेरी गर्दन में बाँधी और मुझे बाहर निकाला।

मैं यह सोच ही रही थी कि जो मुझे इस टोकरी में बन्द कर गया है, वह मुझे भुला बैठा है, पर इतने में ही वह आ पहुँचा। अबकी बार उसके हाथ में एक डोरी थी। उसने उसको मेरी गर्दन में बाँधा, तब मुझे बाहर निकाला। रस्सी से घसीटता हुआ वह मुझे अपने बगीचे में ले गया। वह फलदार पेड़ों का बगीचा था। धीरे-धीरे हम छोटे-से घर के पास आये, जो शायद कुत्ता-घर था। उससे भी छोटा था। उसी बगीचे में दो-तीन ऐसे ही घर और भी थे। वह आदमी झुका और उसने हाथवाली डोरी का सिरा घर से बाँध दिया।

वह बोला : 'बस, अब तुम यहीं बँधी रहो। पक्षियों को डरा-डराकर उड़ाती रहो। फलों के पास पक्षी न फटकने पायें। बस, अब तुम इसी काम की रह गयी हो।' इतना हुक्म देकर वह चलता बना।

नेक सलाह :५२:

उसी बाग में दो बिल्लियाँ और थीं। मेरे ही जैसे उनके भी छोटे घर थे। मेरी तरह वे भी बँधी ही रहती थीं। मैंने उनसे बात करना चाहा, लेकिन वे बहुत दूर थीं। इसलिए, उन्हें देख-देखकर ही अपना मन बहला लेती थी। कुछ न होने से कुछ होना अच्छा!

एक दिन पड़ी-पड़ी मैं अपने भाग्य पर सोच रही थी कि उन बिल्लियों में से एक किसी तरह मुझ तक आ पहुँची। मैं भौंचक्की रह गयी। उसने अपनी डोरी तुड़ा ली थी, इसलिए बात करने आ गयी थी।

आते ही उसने पूछा : 'कहो, तुम कहाँ से आयी हो? तुम इतनी उदास क्यों दिखाई देती हो?' मैंने बड़े आदर के साथ उस बहन को अपने पास बिठा लिया और अपनी आपबीती सुना डाली। फिर मैं उससे बोली कि अब तुम ही कहो, मैं उदास न होऊँ तो कौन उदास हो।

वह मुझसे बहुत ज्यादा उमर की थी, कहीं ज्यादा बुद्धिमान थी। उसने मेरी बात सुनते ही अपनी आँखें बन्द कर लीं। सिर एक ओर झुकाकर एक मिनट कुछ सोचा। तब उसने उत्तर दिया। अब तुम मुझसे पूछती ही हो, तो मैं कहती हूँ। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि जो कुछ तुम पर बीता, उसमें तुम्हारा ही

दोष है। अब बुढ़ापे में तुम्हें एक घर मिल गया है। उसका एहसान मानना चाहिए।

'एहसान मानूँ! गर्दन में रस्सी के फंदे का एहसान मानूँ? किसीसे बोलने न दिये जाने का एहसान मानूँ? मैं नहीं समझती कि तुम क्या कह रही हो? कहीं तुम मुझ पर हँस तो नहीं रही हो। और यह सच है, तो तुम्हें लज्जा आनी चाहिए।'



कहो, तुम इतनी उदास क्यों दिखायी दे रही हो ?

बुढ़िया सौम्य होकर बोली : 'मैं तुम पर क्यों हँसने लगी? जो आदमी अपना कर्तव्य ठीक-ठीक पालन करता है, वह सदा सुखी रहता है। तुम्हारा कर्तव्य है, फलों को पक्षियों से सुरक्षित रखना। यदि यह काम तुम ठीक-ठीक करोगी, तो तुम सुख और सन्तोष से रह सकोगी। यदि तुम वैसा नहीं करोगी, तो इसमें तुम्हारा ही कसूर होगा।'

मैं भी बूढ़ी हूँ :५३:

बूढ़ी बिल्ली ने जो कुछ कहा, वह ठीक था; पर मैं तो उस पर बिगड़ बैठी। पहली बात तो यह कि मुझसे यह सहन न हुआ कि जो कुछ मुझ पर बीती है, उसमें मेरा ही दोष है। मेरा हाल उन्हीं लड़कियों जैसा था, जो घमण्ड में आकर कभी अपना दोष स्वीकार ही नहीं करतीं।

मैं बूढ़ी थी, पर अपने को बूढ़ी मानने को तैयार न थी। मैं तो अपने को जवान समझे हुए थी और खूबसूरत भी! इसलिए मैंने अपनी सहेली बिल्ली की तरफ से मुँह फेर लिया। अपने घर में चली गयी और उससे बात तक न की।

पर वह बिल्ली हठ कर ही दी। मैं अकेले बैठ तंग आ गयी। मैं झल्लाकर बोली : 'बताओ, तुम मुझे बूढ़ी क्यों कहती हो?'

वह बोली : 'मेरी आँखें हैं। तुम मुझ जितनी बूढ़ी नहीं हो, फिर भी काफी बूढ़ी हो।'

मैं बोली : 'पर मैं तो एक बार बहुत खूबसूरत थी।'

उस खरी बात कहनेवाली बिल्ली ने मुझे समझाकर कहा : 'यह तो तुम्हारी शकल ही बता रही है कि तुम कभी बहुत खूबसूरत रही होगी। लेकिन अब तुम खूबसूरत नहीं हो। तुम लँगड़ी हो, तुम बूढ़ी हो, तुम्हारे रोएँ झड़ गये हैं। अब तुम्हारे लिए यही ठीक है कि तुम अब अपनी जवानी और अपना बचपन भूल जाओ और इसे याद रखो कि आज तुम क्या हो।'

'अच्छा, अब मैं वैसा नहीं सोचती, पर मैं तो दुःखी हूँ। उस आदमी को क्या अधिकार है कि उसने मुझे यहाँ बाँध रखा है?'

'देखो, तुम चोरी करने लगी थी, यह तुम जानती ही हो। इस सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कहती। तुम्हें

अपना हाल मुझसे ज्यादा अच्छी तरह मालूम है।'



यह सुन मैं चुप रह गयी।

मेरी सहेली बोली : 'अब सुखी रहने के प्रयत्न करो। यह ठीक है कि तुमसे जवानी छिन गयी है। तुम्हारी खूबसूरती तुम्हें छोड़कर चली गयी है। लेकिन फिर भी काफी तुम्हारे पास है।'

मैं ताना देती हुई बोली : 'अब मेरे पास क्या रह गया है?'

'क्यों नहीं रह गया है? तुम्हारे पास रहने को घर है। खाने को भी अच्छा मिल जाता है। देखने के लिए बहुत फल- फूल हैं। सूँघने के लिए अच्छी गंध है। खुली हवा है, तुम्हें कोई सताता नहीं है। क्या एक बिल्ली के लिए भगवान् की यह देन कम है? क्या इसके लिए तुम्हें अपने भाग्य को नहीं सराहना चाहिए? ●

खरी बात :५४:

यह कहकर बूढ़ी बिल्ली चलने लगी, पर मैंने उसे फिर रोक लिया।

मैं बोली : थोड़ी देर और ठहरो। अकेले मेरा जी नहीं लगता। थोड़ी देर में वह चाण्डाल आता ही होगा। वह फिर तुम्हें बाँध ही देगा। थोड़ी देर तो बात कर ही लो।'

'जरूर-जरूर! तुम कहो और मैं न रुकूँ? मैं तो यह समझी थी कि तुम मुझसे नाराज हो।'

मैं बोली : 'मेरी जगह तुम होती, तो तुम भी नाराज हो उठती। किसीको उसका दोष भी न बताया जाय और उसे सजा दी जाय। सोचो तो, तुमने भी मुझसे बातें करने में कुछ बहुत मिठास तो दिखायी नहीं।'

मेरी सहेली बोली : 'मैं कठोर बनना नहीं चाहती। पर क्या करूँ, सच बात तो कहनी ही पड़ती है। सच से किसीका जी दुःखी हो उठे, तो इसमें दोष किसका? तुम्हीं सोचो कि अगर तुमने अपनी माँ की बात मानी होती, तो तुम पकड़ी क्यों जाती? उस वक्त तो तुम बालक थी। अगर तुम घमण्डी न रही होती, तो दिल्ली में उस बूढ़ी गलिहारी बिल्ली की बातों में न आ गयी होती। न तुम उससे चोरी सीखती, न आज इस हालत को पहुँचती। अगर तुम खूबसूरत और मूर्ख न होती, तो आज तुम जरूर अपनी बहन कपूरी की तरह आराम से रही होती।' ●

टाली से बेगार भली :५५:

जब बूढ़ी बिल्ली बोल चुकी, तो मैं उदास हो गयी। क्योंकि उसने जो कुछ कहा, रत्ती-रत्ती सच था। अब मुझे मालूम हुआ कि मैंने जो कुछ किया, गलत किया। यह विचार आते ही मेरी उठी हुई पूँछ नीचे गिर गयी और मैं लजा गयी।

बूढ़ी बिल्ली मेरी अवस्था देखकर बोली : 'इसमें न दुःख मानने की जरूरत है, न शरमाने की। सभी से इस तरह की भूलें होती हैं। अब मुसकराओ और हँसो। मैं जो कहती हूँ कि अब तुम सुखी रह सकती हो।'

'पर किस तरह, यह मैं नहीं जानती।'

'अपना कर्तव्य पालन करने से।'

'पर मेरा कर्तव्य क्या है?'

'तुम्हारा कर्तव्य है पक्षियों को उड़ाना, जो उन फलों के पास आयें। इससे तुम्हारा मालिक खूब खुश होगा और खूब खाने को देगा।'

'पर यह तो बड़ा कठिन काम है कि मैं जरा भी देर न लेटूँ। जब देखो, तब कूदती-फाँदती ही रहूँ। और सो भी उन पक्षियों की तरफ, जिनमें से मैं एक को भी कभी पकड़ न पाऊँ।'

'काम से मत घबराओ। जब बहुत काम होता है, तब अपनी बात सोचने का वक्त ही नहीं मिलता। काम में लगे रहने का यही तो गुण है।'

मैं आह खींचकर बोली : 'बूढ़ा और बदसूरत होना बड़ा पाप है!'

मेरी सहेली बोली : फिर वही बात! फिर तुम अपनी ही सोचने लगी। अपनी मत सोचो, अपने काम की सोचो। जो काम तुम्हारे सुपुर्द है, उसे करो और अच्छी तरह करो। सुखी रहने का यही मन्त्र है। दुखड़ा वही रोते हैं, जो खाली होते हैं। जो काम में लगे हैं, उन्हें बड़बड़ाने की कहाँ फुरसत है?' ●

सुख की राह :५६:

सयानी बूढ़ी ने अपनी बात पूरी की ही थी कि बाग का मालिक आ पहुँचा। उसने उसे आवाज दी। वह चल दी। और मेरे देखते-देखते वह एक नयी डोरी के टुकड़े से बाँध दी गयी।

मैंने अच्छी तरह सोचा-समझा। अपनी सहेली की बात को उलट-पलटकर देखा। उसकी सीख पर अमल किया। उस दिन मैंने जी-तोड़ परिश्रम किया। इसमें शक नहीं कि उस दिन मुझे अपनी याद नहीं आयी। मैं खुश रही। सयानी बिल्ली की कसौटी पर रत्ती-रत्ती ठीक उतरी।

यह ठीक है कि मेरा जीवन सरल-सुगम नहीं है। कठिनाइयों से घिरा हुआ है और मैं अक्सर यह सोचती रहती हूँ कि मैं क्या थी और क्या हो गयी हूँ।

मेरा मालिक बहुत दयालु भी नहीं है और अब मुझे अन्नो और रमारानी जैसी देवियाँ प्यार करने को नहीं मिल सकती हैं। फिर भी जितना कुछ है वह काफी है। किसी को क्यों कोसूँ।

जब भी मुझमें उदासी आती है, मैं अपने काम में लग जाती हूँ। मेरा मन हरा हो उठता है। सूरज डूबने तक मुझे सबसे ज्यादा काम रहता है; क्योंकि उसी समय मेरा मालिक आ जाता है और वह सब माल उठाकर ले जाता है, जिसकी मैं दिनभर पक्षियों से रक्षा करती हूँ। यह देख मुझे बड़ी तसल्ली होती है। बड़ा सुख मानती हूँ। ●

बच्चो ! दूसरों के लिए जीना सीखो ! :५७:

प्यारे बच्चो, मैं यह चाहती हूँ कि तुम कभी-कभी यहाँ आया करो और मुझे काम करते हुए देखा करो। आपबीती मैं तुम्हें सुना ही चुकी। उससे जो सीख चाहो ले लेना।



बच्चो ! दूसरों के लिए जीना सीखो

मेरी सुनो, दूसरों का ज्यादा सोचो, अपना बहुत कम। खूब परिश्रम करो। दुनिया के काम के बनो। बड़े-बूढ़ों का कहना मानो। माँ-बाप जो कहें सो करो। गुरुओं का सम्मान करो। सबसे बड़ी बात यह कि उस कर्तव्य का पूरा-पूरा पालन करो, जिसे तुम सत्य कर्तव्य समझते हो। फिर चाहे वह रुचिकर हो या न हो।

तुम बच्चे हो, मैं बूढ़ी हूँ। मैं दुनिया देखी हुई हूँ। मैं सयानी हूँ। मेरी बात गाँठ बाँध लो कि तुम्हें उम्रभर बच्चा नहीं रहना है। उम्रभर पढ़ते ही नहीं रहना है। एक दिन बड़ा होना है। घर सँभालना है।

दुकान सँभालनी है। देश सँभालना है। सारे जगत् के सदस्य बनना है। इसलिए इसी उम्र में काम करना सीख लो, दूसरों के लिए जीना सीख लो।



sssprakashan.com

₹ 40/-